प्यास के पंख

एक समस्यामूलक सामाजिक उपन्यास

यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र'

राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली

मैं इतना ही कहूँगा

'प्यास के पंख' एक लघु उपन्यास है। लघु उपन्यास होने के कारण इसमें उन मर्मों पर विस्तृत रूप से प्रकाश नहीं डाला गया है जो एक बहुत् उपन्यास के गुण होते हैं। इसमें मैंने जीवन की कई महत्त्वपूर्ण समस्याओं पर प्रकाश डाला है। आज हमारा जीवन असंतोष में जल रहा है। एक अशांति का साम्राज्य हमारे चारों ओर व्याप्त है। समाज की मान्यताएं मारकीय दंड-सी लगती हैं। पुरानी मान्यताएं टूट रही हैं और नई बन रही हैं। संक्रान्ति काल की पीड़ामय सन्धि! तब भगवान् बुद्ध की वाणी का उद्‌घोष—'तृष्णा का अंत करो' हमारे समक्ष समाधान के रूप में प्रस्तुत होता है। शैलीगत नवीन प्रयोग उपन्यास में रोचकता की अभिवृद्धि करते हैं। पाठक इसका किस दृष्टि से मूल्यांकन करते इसकी मैं प्रतीक्षा करूंगा।

—यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र'

आदमी का मन

अपराह्न की आकुल बयार क्षण भर बहकर इस तरह रुक गई थी मानो सावन के नील-धूम्र अम्बर में मृगछौनों की भांति निर्द्वन्द्व भागते हुए श्वेत बादलों के टुकड़ों को वह निष्कम्प होकर देखना चाहती हो। कभी-कभी बादलों के छोटे-छोटे टुकड़े मिलकर प्रचण्ड सूर्य को ढक लेते थे तो संध्या जैसी धुंध छा जाती थी।

अपने सज्जित कमरे में अशान्त चिन्ता-प्रखर मस्तिष्क लिए वकील सरयूराम व्यग्रता से चहलकदमी कर रहा था। उसकी भंगिमा से ऐसा प्रतीत होता था जैसे वह अपने अन्तराल में तूफान छिपाए हुए है। उसने प्राणपण से अपने को स्थिर व संयत रखना चाहा पर वह इसमें सर्वथा असमर्थ रहा। उसकी चहलकदमी बढ़ती गई।

अशांत उद्विग्न और व्यथित।

प्रशान्त-स्थिर नीले नभ के भागते हुए बादल के टुकड़े अकस्मात् भीमकाय काली घटाओं में परिवर्तित हो गए। घटाओं का गर्जन पल-पल अधिक मुखरित हो रहा था।

चिन्ता की प्रखरता से अभिभूत वह घटाओं के बीच दीप्त दामिनी में खो गया। बूंदों का वर्षण प्रारंभ हो गया था। एकाध बूंद उसपर आकर पड़ जाती थी। बिजली तड़प रही थी घन गरज रहे थे और बाहर सड़क पर दो चार बच्चे स्नान कर रहे थे।

सरयू ने उन बच्चों के साथ अपने को आत्मसात् किया। उसे अपने आपको इस तरह आत्मसात् कर देने में असीम आनंद का अनुभव हुआ। स्मृति के पंख उड़े, अतीत की ओर उड़े।

जब वह छोटा था ठीक उसी प्रकार स्वच्छंद होकर वर्षा में स्नान किया करता था। उसकी मां हरदम उसे टोका करती थी पर वह उसकी जरा भी परवाह नहीं करता था। वह अपनी मां का इकलौता बेटा था—हृदय का सहारा और आंखों का तारा।

वर्षा में खेलने वाले बच्चे खेल ही खेल में झगड़ पड़े। एक बच्चे ने कसकर

दूसरे बच्चे के मुंह पर घूंसा लगा दिया। दूसरा बच्चा दुर्बल था इसलिए प्रति
रोध की शक्ति उसमें नहीं थी अतः वह करुण रोदन करता हुआ एक ओर खड़ा
हो गया। विजयी लड़का जैसा कि समर भूमि में विजेता शत्रु को पराजित करने
के पश्चात् विजयोल्लास में उन्मादित होकर हुंकार करता है ठीक उसी भांति हुंका
रने लगा।

सरजू हठात् सोचने लगा—मनुष्य अपनी आदिम प्रवृत्तियों को नहीं छोड़
सकता। ये प्रवृत्तियां उसके अन्तरतम मन में उसके गुप्त प्रदेश में ज्वालामुखी के
आग की तरह छिपी रहती हैं समय-समय पर उचित अवसर पाकर बढ़कर आपती
तब मनुष्य पशुवत् हो जाता है। ये प्रवृत्तियां केवल युद्ध, भूख और भय। ये
दो लड़के—एक में युद्ध की प्रवृत्ति और दूसरे में भयजनित आत्मरक्षा। मनुष्य
सभ्यता के पथ पर आरूढ़ है? छि: छि:! आदमी इन्हीं प्रवृत्तियों का दास है।

तभी पराजित बच्चे ने गीली मिट्टी का एक लोथड़ा उठाकर विजयोन्मादित
बच्चे पर फेंक दिया। शक्तिवान् शक्तिहीन को दबाए, इसके पहले ही वह
शक्तिहीन भाग गया।

सरजू ने एक बार महागर्जन करते मेघराज की ओर निहारा। उसके मन
में कटु स्मृतियां निर्मल आकाश की भांति ज्योतिमान होने लगीं।

उसे याद आया—अपना शहर अपनी जन्मभूमि जहां उसका बचपन मनु-
भठियारियों के साथ व्यतीत हुआ था।

नगर की चहारदीवारी के समीप एक उसका कच्चा घर था। कच्चा भी ऐसा
कच्चा केवल मिट्टी का सफेद और गेहुंए रंग की मिट्टी में गोबर मिलाकर जैसे
तैसे जीवन-निर्वाह के लिए घर बना लिया गया था। उसका बाप बिसू उसे बूढ़ा
घर कहता था। सब बार भी बारिश हो तब वह भूमिसात् हो जाए। उसके
मस्तिष्क में यह प्रश्न इस घर का मकर सदा उपस्थित रहता था। जीवन के शेष
दिनों में उसे याद है कि इस घर ने उसके पिता को अत्यंत व्यग्र और व्यथित कर
दिया था।

उसकी मां हृदय की दयालु होने के साथ-साथ उसके बाप से बहुत भिन्न स्वभ
हार रखती थी। कभी भी उसमें मधुर भाषण नहीं करती थी। फिर भी उस

बाप उससे असीम स्नेह रखता था। उस पर अपने प्राण न्यौछावर करता था।

एक दिन उसका बाप शराब पीकर आया था। बिरादरी में किसी की शादी थी। धोबी जाति में विवाहोत्सव पर दरिद्र से दरिद्र धोबी भी अपने सगे-सम्बन्धियों को प्रसन्न करने के लिए ऋण लेकर भी अफीम शराब का प्रबन्ध करता है। शराब भी कैसी विशुद्ध देसी ताड़ी। उत्तेजक और बदबूदार! ऐसी दावत देना बिरादरी में सम्मानसूचक है, शान की बात है। इसे बेटी का बाप दुल्सी अच्छी तरह जानता था। इसलिए अपनी बिरादरी में अपनी मूछ का चावल रखने के लिए उसने साहूकार से कर्ज लेकर भी बिरादरी को तुष्ट किया। उससे वाहवाही लूटी।

दिल्सू पुराना पियक्कड़ था। प्रिया-भय से भले ही वह अपनी आत्मा की सबभेष्ठ इच्छा को दबाता रहे लेकिन ज्योंही उसे किसी की आड़ मिलती त्योंही वह शराब में आमूड़ स्नान करने का प्रयास करता था। वह शिवजी की भांति गरल का आकंठ पान करता था। वह पीनेवालों के मध्य शराब की इस तरह स्तुति करता था जिस तरह मन्दिर का पंडित अपने भक्तजनों के समक्ष प्रभु की करता है।

तब वह मतवाले भैरव की भांति झूमता हुआ अपने घर आता था। शराब में उसकी चेतना प्रायः खो जाती थी। फिर भी उसके अचेतन मन में अपनी पत्नी का भय कांपती हुई लौ की तरह सलकता रहता था। उन्माद के विश्व में अपने को खोकर भी वह इस दुश्चिन्ता से मुक्त नहीं हो पाता था।

घर की देहलीज पर वह एक बार सावधान होता। प्यार से पुकारता 'सरजू!" उसका यह स्वर स्वाभाविकता से अधिक लम्बा होता था।

सरजू भागकर उससे लिपट जाता था। वह उसे गोद में उठाकर सड़ा-गला सेब या अनार देकर अपनी पत्नी की सहानुभूति प्राप्त करने का प्रयास करता था पर पत्नी उसकी चाल को तुरन्त भांप लेती थी। उनकी आंखों की भाषा तुरन्त समझ लेती थी और सेनानी की भांति भभककर तनकर कर्कश स्वर में पूछती "यह आंखें लाल क्यों है?

वह आकुल होकर बगलें झांकने लगता। इधर-उधर निहार कर रुकते-रुकते कहता 'बात यह है 'बात यह है सरजू---की।" वह पूरा बोल भी नहीं

पड़ता था कि वह बीच में गरज पड़ती "तू अपनी आदत से लाचार है। तू पिए बिना मानेगा नहीं चाहे तेरा घरबार तुझे देख-देखकर कितना ही क्यों न बिगड़ जाए ? तू सचमुच बाप नहीं कसाई है, अपने हाथों अपने पेट के लिए कब्र खोद रहा है।"

बिरजू मृतक की तरह मौन रहता और मूर्ति की तरह निश्चल। पर उसकी पत्नी कब मानने वाली थी ? चीखती रहती थी पांव पटकती रहती थी उलजलूल उपदेश देती रहती थी।

और अन्त में तनिक स्थिर और शांत होकर पूछती "आखिर तू चाहता क्या है ?"

बिरजू जब देखता कि उसकी पत्नी का गुस्सा कुछ ठंडा पड़ गया है तब वह उसी बाजीगर की भांति 'सिसकी' भरता था। उसने अभी भी वही अनुकरण किया "तुम सिसकी तू गुस्सा व्यर्थ ही करती है। बिरादरी की बात ठहरी पीनी ही पड़ती है। "अरे वह दुल्ली है न, उसने जोर-जबरदस्ती उसकी पिला दी। मैं उसे मना भी करता रहा।"

"अच्छा आप उसे मना भी करते रहे और वह आपको पिलाता रहा। हे राम ! कितना सफेद झूठ बोल रहा है तू क्या उसने अपने घर में शराब की भट्टी लगा रखी है ? या उसे कहीं खजाना मिल गया है ?" वह घूमकर उसके एकदम समीप आ जाती।

बेचारा बिरजू चुप शांत और भयभीत।

तू वकील होती तो कितना अच्छा होता। तुझसे जीतना बड़ा कठिन है। अब तू बड़ा तर्क करती है। बात को ऐसे काटती है बस बोलती बन्द हो जाती है। "हां सरजू कहां है ?"

"कहीं खेलता होगा।"

"अच्छा-अच्छा वह आए तो उसे यह सेब दे देना।" वह सेब अपनी पत्नी को देकर सो जाता था।

पत्नी सेब को सूंघकर बड़बड़ाती "बदबूदार, सड़ा हुआ जानकर वह रास्ते से उठाकर लाया है। यदि खरीदा है तो पैसा मुफ्त में लुटा आया। छि: छि: यह कोई

…म है, इसे तो पशु भी न सूंघे।' तब वह तेज स्वर में दूर से ही कहती "अब …रीदना नहीं आता है तो मत खरीदा करो पैसा धूल में फेंक आते हो।

बिरजू अपनी पत्नी का फुफकारना बड़बड़ाना बड़ी देर तक सुनता रहता था। …ब वह बोलती-बोलती थक जाती तब वह बिस्तरे से ही कहता "सिमसी भूख …गी है।"

भूख शब्द सुनते ही सिमसी का पारा फिर सातवें आसमान पर। स्वर में …ारी घृणा भरकर कहती 'यह पड़ा नमक-रोटी आ और खा ले बादशाह की …रह हुक्म कहीं और चलाया कर, मैं अपने सरजू को खोजने चली।

बिरजू आज से नहीं बर्षों से अपनी पत्नी के इस स्वभाव से परिचित था कि …ह इसी प्रकार उससे मूठमूठ ही रूठकर चली जाया करती है, सरजू तो केवल …हानामात्र है निमित्त है। वह मानिनी उसके समक्ष पराजित होना नहीं चाहती …ुकना नहीं चाहती। वह जब चली जाती थी तो बिरजू चुपके से उठकर रसोई …में चला जाता। एक कोने घास की छप्पर डालकर बनाई रसोई, धुएं से काली …टमैली घुटनदार। वह खाता और एक कटोरे में रखा दूध ढककर जाकर …पनी पत्नी को दुआएं देकर सो जाता।

तब वह प्रेमविह्वल हो आता था। उसके नेत्र अश्रुप्लावित हो जाते थे। वह …पने आप कह उठता था 'जबान तीर-सी भले ही हो पर हृदय मोम-सा है।' …ह अपनी पत्नी पर अपने आपको सात लोकों को विसर्जन करता हुआ निद्रा की …ोद में सो जाता था। सुख और संतोष की अपरिसीम भावना लिए।

वह सो गया।

मधुर स्वप्नों के स्वर्णिम पंख उसके अचेतन मस्तिष्क में छाने लगे।

तभी सरजू की मां आई। उसे सोया हुआ देखकर बिगड़ उठी। अपने आंचल से कुछ पैसे रखकर पूर्ववत् स्वर में बोली 'घोड़े बेचकर सो गया है। अरे यह कुंभ करण का बसंत है। और सरजू कहां है? 'सरजू आह अभी तक साहबजादे पधारे ही नहीं हैं। और इसको देखो न पिता को खूंटी पर टांग कर सोया है। बच्चा कहां है? क्यों नहीं आया है? रात बीतती जा रही है। उफ! यह कैसा बाप है? न बेटे की चिंता और न घर की फिक्र! सेठ बनीराम ने आज पैसा देने को कहा था

यदि मैं अभी जाकर पैसा नहीं लाती तो सेठ उस मंगलवार को देता। कैसा अजीब आदमी है? शेर की तरह गुर्रा कर कहता है—पैसा मैं केवल मंगलवार को ही देता हूं—बस मंगल तो मगल नहीं तो अमंगल। मंगल गया और हररोज कुआं खोदकर प्यास बुझाने वालों का अमंगल आया।" वह विचारों के तूफान में उड़ती रहती। उसके उर्वर मस्तिष्क में उबड़-खाबड़ पगडंडी की भांति असामयिक और असम्बद्ध बातें उठती रहतीं। वह उन्हें प्रगट करती रहती। यही उसका स्वभाव था। चिर नूतन—चिर पुरातन।

मूसलाधार वर्षा थम गई थी।

मेघों का गरजना बिजलियों का तड़पना अब प्राय: बन्द हो गया था। सड़क शून्यता में आवर्त थी। अतीत की मधु स्मृतियां विचारोत्तेजक सरजू को तनिक सान्त्वना दे रही थीं। अब खिड़की से हटकर पलंग पर आकर वह अर्धशायित हो गया था। उसने अपना टेबल-लैम्प जला लिया।

प्रकाश के साथ उसके अन्तर में पावन नवोन्मेष आया। अतलान्त के गहन आवरणों में सुप्त ममत्व अंगड़ाई ले उठा। उसके म्लान मुख पर वात्सल्य की मधुरिम रेखाएं दौड़ गई।

उसकी मां! ममता की साक्षात प्रतिमा। धीर, वीर गंभीर। तीखे स्वर वाली और वाचाशिव।

जब वह आठवीं कक्षा में पढ़ता था। इन आठ सालों में कोई विशेष परिवर्तन नहीं हुआ हां शहर का राजा मर गया था। युवराज महाराजा बन गए थे। बस इतना ही परिवर्तन। इतना ही हेरफेर।

उसके बाप की वही आदत। उसकी मां का वही स्वभाव। वही खटपट वही वाग्युद्ध और वही शांति-समझौता।

रात्रि की वेला। कालिमा का साम्राज्य। सिसकती अमी का वस्त्र।

लड़के बचाओ।

हू हू हू, बचाओ। बचाओ ही ही ही ई ई

राम राम राम

राम लक्ष्मण जानकी जै बोलो हनुमान की

सीताराम' सीताराम' ऽऽऽऽऽ

प्रत्येक लड़का अपना-अपना सूत्र बोल-बोलकर विरोधी दल के लड़कों को निष्कासित करके जय-श्री का सेहरा अपने पर लेने का भरसक यत्न कर रहा था।

सरजू चूंकि बोदी था अतः उसने अपना सूत्र सबसे भिन्न बना लिया था। विरोधी दल के क्षेत्र में घुसने के साथ ही उसके होंठों से फूट पड़ता था—कपड़ा धोऊं, कपड़ा धोऊं ऊं ऊं ऊं ऊ ऽऽऽ

लोग उसके इस कथन पर हंसते थे तालियां पीटते थे।

हा-हा-हा ही-ही-ही!

लेकिन सरजू अपने खेल में तन्मय रहता था। उसका ध्यान अर्जुन की भांति एकाग्र होकर शत्रु को पराजित करने में लगा रहता था। वह निश्चित रूप से विजयी होता था। उसके दल वाले उसे सदा शाबाशी दिया करते थे।

अभी खेल समाप्त भी नहीं हुआ था।

तभी बाबूराम के लड़के प्रयाग ने लड़कों के बीच से छिपकर सरजू की चोटी खींच ली। सरजू इतनी भीड़ में यह नहीं समझ सका कि यह हरकत किसने की है। पर उसने सभी के मुखों पर कुटिल हास्य देखा जो उसके लिए असह्य था। वह सावधान होकर खड़ा हो गया। प्रयाग ने पुनः धृष्टता की। सरजू ने उसका हाथ पकड़ लिया। बस फिर क्या था? गाली-गलौज मुक्कम-मुक्का मार-पीट!

प्रयाग तगड़ा था। मोहल्ले के प्रसिद्ध पंडित बाबूराम का बेटा था।

रक्त-रंजित रक्त-गौरव! वह सरजू पर पिल पड़ा। खेल खत्म! लड़के उन दोनों को घेरकर खड़े हो गए। कभी प्रयाग को उकसाते और कभी सरजू को वाहवाही देते।

परिणाम यह निकला—सरजू पिट गया। वह अपने वस्त्र झाड़कर जाने को उद्यत हुआ ही था कि उसके कानों में किसी नारी की भयानक चीख पड़ी।

उसके कान खड़े हो गए।

'मौसी' उसके मुंह से हठात् निकला और वह अपनी पीड़ा भूलकर द्रुतगति से अपनी मौसी के घर की ओर भागा।

उसके घर से थोड़ी ही दूर पर उसकी मौसी का मकान था। कच्ची मिट्टी का घर उसके मकान से ज़रा बड़ा। क्योंकि उसकी मौसी का ससुर अपनी बिरादरी का सरपंच था प्रतिष्ठा सम्पन्न वृद्ध।

उसका धंधा भी प्रसन्न शर्तों पर चलता था। उसने घर बांध रखे थे। सेठ चिम्मनलाल के घर से तीन रुपए सेठ रामदास डागा का घर—पांच रुपये पंडित चुन्नीलाल जी का घर—तीन रुपए, हंसा विधवा का घर—एक रुपया आदि आदि।

विवाह-शादी पर अलग-अलग लाग। मृत्यु भोज पर एक थाली। सम्बन्ध घरेलू, व्यवहार नौकर-मालिक-सा।

वह अपने ग्राहकों को 'सेठजी' कहता था और ग्राहक उसे 'फग्गू' या 'फगला'। वह 'आप' से सम्बोधित करके सम्मान देता था वे 'तू-तू' करके उसे गली के कुत्ते का स्मरण दिला देते थे। फिर भी वह परम्परा का पोषक था। प्राचीनता के प्रति मोह और आदर।

वह शूद्र है, शूद्र! नीच पतित और गुलाम! ऐसी उसके मन में धारणा थी सेवा उसका धर्म मोक्ष लोक-परलोक का कल्याण!

उस बाप का बेटा था जैतू। सरजू का मौसा। शराबी यार, कामचोर।

बकील सरजू ने बेचैनी से करवट बदली। वह उत्तप्त हो उठा। व्यथा की उत्ताल तरंगें उसके मानस को मथने लगीं।

मानस-सागर का मथन!

अमृत और सुख! नहीं नहीं दुःख-पीड़ा व्यथा। संताप मर्मान्तक आघात सरजू का तमाम शरीर स्थिर हो गया।

हां उसकी मौसी! नारी-चरित्र की प्रतिमा! विचित्र महाविचित्र! सुगम अगम और अबोधगम्य!

उसकी मौसी सरसा और जैतू! प्रीत के प्रतीक। अनुकरणीय!

एक दिन विलास की तीव्र भावना जीवन-परिधि को लांघकर उन दोनों मध्य खड़ी हो गई। व आपस में प्यार करने लगे। लाज लगी फिर डर कैसा ठीक ही तो है। प्यार की लगन प्रीत की तपस्या फिर भय और विवशता कैसी

सरमा ने संसार के समस्त बन्धनों को तोड़ डाला।

उसका अभी-अभी विवाह हुआ था। हाथ की मेंहदी का रंग भी फीका नहीं पड़ा था। वातावरण में गुंजित पैजनियों के मधु घुंघरुओं का मधवित भी बन्द नहीं हुआ था और उसने अपने पति को त्याग दिया।

एक दिन लोगों ने देखा—सरमा बिना बिरादरी का निर्णय सुने चैतू के घर में चली गई है।

बिरादरी को चुनौती देना सहज नहीं था।

बिरादरी की अजेय शक्ति उसके कानून और उसकी मर्यादाएं।

सरमा के पति ने आकर पंचों के दरवाजों पर दुहाई लगाई।

बिस्सू सरपंच था। बिरादरी में उसका बड़ा दबदबा था। वर्षों से उसके न्याय की दुंदुभि बाहर का कोना समाज सुनता आया था। दूध का दूध और पानी का पानी यही उसका न्याय था। यही उसके निर्णय का प्रतिफल होता था। 'नीर क्षीर विवेक' यह उक्ति उसके न्याय के लिए कही जा सकती थी।

सरमा का पति खेतू समाज की देहलीज पर आया। उसने पंचों के कानों के पर्दों को हिलाने की चेष्टा की। वह बिस्सू के पास आया। बिस्सू ने उसकी बात सुनी। उसने खेतू को आश्वासन दिया "तुम्हें न्याय मिलेगा।

खेतू असंतोष के स्वर में भरकर बोला "देखो बिस्सू, अन्धेरा देखकर पांव फिसल न जाए। यह घर का न्याय है समझा। तेरी सगी साली है, कहीं जोरू की डांट-डपट में न्याय का गला न घोंट देना।"

"पंच अपनी गद्दी पर बैठकर झूठ का सहारा नहीं लेता है।" बिस्सू ने दम्भ से कहा "एक बात मैं तुझसे अपने नाते कहना चाहूंगा। यदि तू शांति से उस पर विचार करे तो?"

"क्या?"

"तू मर्द का बच्चा है यदि तेरी जोरू तेरे हाथों में नहीं है तो तू भी दूसरी से नाता क्यों नहीं कर लेता? अपने समाज में यह सब जायज है।

खेतू को यह बात रुचिकर नहीं लगी। वह तुरन्त गुस्से में भर उठा 'तूने कर दिया न्याय? अरे बिस्सू! मैं पहले ही जानता था कि तू फिसलेगा, यह सगी

साली का मामला है।"

फिर अर्थ का बेमर्म निकालने लगा। मैंने तुम्हें एक मित्र के नाते यह बात कही थी ब के नाते नहीं।

मदू निराश होकर वहाँ से चलता बना।

सहसा सरजू का हृदय भारी हो गया।

बीना ने कमरे में प्रवेश करके उसके अतीत के स्वप्न को भंग कर दिया।

बीना आवश्यकता से अधिक मौन रहती थी। बहुत ही सीधी और सादी। विधवा। गरीब।

दिन भर का कठोर श्रम बराबर पचास रुपया और दो जून रोटी।

"बाबू जी चाय।" उसने कमरे में घुसते ही कहा।

सरजू बैठ गया। उसके चेहरे पर गम्भीरता पूर्ववत् थी।

"नौकरानी कहाँ है?"

"छुट्टी पर।" बीना ने उत्तर दिया।

"यह हर रोज की छुट्टी ठीक नहीं है। कभी उसके सिर में दर्द कभी उसके पेट में पीड़ा और कभी उसकी फूफी की पोती की बहिन का दामाद आ जाता है। यह कैसी समस्या है? देखो बीना तुम उसे साफ-साफ कह देना कि काम काम के ढंग से होना चाहिए, नहीं तो नहीं तो सदा के लिए छुट्टी ले लो।"

बीना कुछ क्षण निश्चल-सी खड़ी रही। उसने चाय का प्याला सरजू को थमा दिया।

चाय का एक घूंट लेकर सरजू ने पुनः कहा "मैंने जो कहा तुमने वह सुना?"

"जी पर मैं सिन्नी को यह सब नहीं कहूँगी।"

"क्यों?"

"आज वह इसलिए नहीं आई चूंकि मैंने उसे यह आश्वासन दिया था कि तुम्हारा काम मैं कर लूंगी।"

"तुम अकारण आपको इतनी पीड़ा क्यों दिया करती हो? न हँसती हो न बोलती हो और न घर से बाहर निकलती हो। इस प्रकार से आत्म हनन करना

स्वयं को सताना कहां तक उचित है ?"

"मैं अपने आपको सताकर दूसरों को सुख देने में ही आनन्द पाती हूं। इसे ही जीवन का चरम लक्ष्य एवं परम सुख मानती हूं। स्वयं की समाप्ति दूसरों का पोषण।"

"क्यों ?"

वीणा ने नत नयन करके संयत स्वर में कहा "वकील सदा 'क्यों-क्या-किस लिए' द्वारा जीवन के गहन मर्म को प्रगट कराना चाहते हैं। मैं एक वर्ष से आपके स्वभाव उसकी क्रिया प्रक्रिया आपके कथन की प्रतिक्रिया सभी तो देख रही हूं। मैं आपके तर्कजाल के चक्कर में नहीं आ सकती। मौन निर्भ्रान्त मौन ही आपके समक्ष विजयी हो सकता है।"

सरजू सदा की भांति चुप होने से पहले बोला "तुम अपने आपको दुःख पहुंचाकर औरों को भी तो पीड़ा पहुंचाती हो।" और वह चुप हो गया।

चाय समाप्त हो गई थी।

वीणा उठती हुई बोली "खाना ?

"आज मैं खाना नहीं खाऊंगा।"

वीणा चली गई। सरजू वेदना से अभिभूत हो बोला "निष्ठुर !" शब्द मुंह से निकलने के साथ ही सरजू सावधान हो गया। उसकी समग्र चेतना इसी एक शब्द 'निष्ठुर' पर केन्द्रित हो गई। उसे महसूस हुआ जैसे उसने यह शब्द उच्चारित करके एक अपराध कर दिया हो पाप कर दिया हो।

वीणा उसके बच्चे की आया एक साधारण नारी ठीक-ठीक।

उसे क्या अधिकार है—इस प्रकार गहरी आत्मीयता से उसके बारे में सोचने का ? वह निष्ठुर है या कोमल उसे क्या ? वह तो उसके मातृहीन बच्चे की आया है किराये की मां। जो पूंजी के बदले अपनी ममता बेचती है अपना स्नेह देती है अपना नारीत्व का चरम पद देती है।

'वीणा-वीणा-वीणा !' यह शब्द उसके मानस-लोक के दिगदिगन्त में ध्वनित प्रतिध्वनित हो उठा। आवेगजनित आकुलता के मारे वह विचलित हो गया।

वकील सरजू पुनः खिड़की के पास आकर खड़ा हो गया।

रात के रंग का आसमान निर्मल हो गया था। गगनपथ के कूल पर कोई कोई बादल का टुकड़ा उस पापी मनुष्य की याद दिला रहा था जो अपने जीवन के महापापों को एकान्त में धोने के लिए पावन-गंगा में स्नान हेतु आया हो। पवन का हल्का झोंका भी आ-जा रहा था।

वकील सरजू ने एक दीर्घ निश्वास लिया। अपने आपसे कह उठा 'मैं कितना असहाय और दीन हूं। मेरा कोई नहीं यही एकान्त यही पीड़ा और यह मानसिक पेशा—वकालत। झूठ का सच और सच का झूठ! उफ! पत्नी गिरिजा हां मेरी गिरिजा अपनी स्मृति देकर सदा-सदा के लिए मुझे दुखी बनाकर चली गई। "यह मन्नू" उसका बेटा और मेरा खिलौना। पर "मन" "मन का सन्ताप उसकी अतृप्ति और वासना! ओह मैं कितना निस्सहाय हूं। न बच्चे को गोद में लेकर मन बहला सकता हूं और न अपनी वकालत में अपना अस्तित्व विलीन कर इस एकान्त की भयंकरता को मन से निकाल सकता हूं।

नर-नारी! नारी पुरुष की सम्पूर्णता! नैसर्गिक आनन्द जीवनोल्लास! वकील सरजू के मस्तिष्क में नीना की आकृति फिर झांकने लगी।

"बाबू जी दूध!" नीना ने पुनः आकर कहा।

"जी।" कहकर सरजू सावधान हो गया तुम मुझे नाम से नहीं पुकार सकती? यह 'जी' कहकर अपने हृदय में हीन भावना क्यों उत्पन्न कर रही हो।"

/"यह नैतिक अध्ययन भी अच्छा नहीं। मनुष्य अपनी सारी स्वाभाविकता का परित्याग करके चिन्ता के आवर्त में झूलने लगता है। यह मनोवैज्ञानिक दृष्टि से उचित है या अनुचित? यह इस सिद्धान्त के अनुकूल है या नहीं? यह अथवा मेरे उद्देश्य के प्रतिकूल है? कह-कहकर वह अपने का एक अन्य तरह का मानिक बनाने लगता है जिसे मैं बुद्धिवादी मानिक कहती हूं। यह बुद्धिवादी मानिक साधारण मानिक से अधिक खतरनाक होता है। क्योंकि वह हर शब्द हर हरकत हर मुस्कान हर आंसू का तार्किक तात्पर्य निकालता है। उसकी पत्नी उसके मित्र से तिरछी दृष्टि करके मुस्कराई क्यों अथवा उसकी अनुपस्थिति में उसने उसको चाय क्यों पिलाई? इन दो वाक्यों का वैज्ञानिक विश्लेषण! सन्देह का अवलोकन और अन्त में कटुता वैमनस्य और सम्बन्ध-विच्छेद!"

वीणा चुप हो गई। वकील सरजू उसकी ओर नादान बालक की भांति टुकुर टुकुर देखने लगा। जब वीणा उसकी आंखों से ओझल हो गई तब वह अपने आप पर झल्ला पड़ा मैं व्यर्थ में क्यों उसे समझाने का प्रयास करता हूं यह जिद्दी है मानती तो नहीं। उसने एक पल के लिए अपने कमरे में अन्धेरा किया। उसे अन्धेरे में शांति मिली। फिर वह प्रकाश करके अपनी पत्नी के चित्र के समक्ष खड़ा हो गया, "गिरिजा तू भी बड़ी हठी और चंचल थी। अपने हठ के आगे तू किसी की भी नहीं मानती थी। उस पर जीवन-मरण का प्रश्न खड़ा कर देती थी। संघर्ष और समर्पण! इच्छा की पूर्ति के बाद प्यार का दान! गिरिजा गिरिजा मैं कितना निस्सहाय हूं ?

वकील सरजू क्षण भर के लिए दुःख से द्रवित हो गया। अतीत उसकी आंखों के समक्ष पुनः नाच उठा। उसकी मौसी को उसका मौसा पीट रहा था। वह पंडित के बेटे से झगड़ा करके बेतहाशा अपनी मौसी के घर में घुसा था। उसका मौसा बैंतू तड़ातड़ उसकी मौसी पर बेंत बरसा रहा था। मौसी पत्थर की प्रतिमा बनी खड़ी थी। हर बेंत के साथ उसके मुंह से सीत्कार निकलती थी। जैसे उस नारी की दब गई थी।

वह खड़ा रहा—एक विमूढ़ दर्शक की भांति। उसकी मौसी आंसू बहाती-बहाती धम से गिर गई और बैंतू नशे में धुत् हुआ कर्कश स्वर में कह रहा था—"मैं कहता हूं कि तेरा यह सुहाग झूठा है तेरी यह चूड़ियां झूठी हैं और तू खुद बदजात है। मैं पूछता हूं कि कान का झुमका कहां गया ?"

समीप ही सुरगा का अपाहिज बच्चा गुमसुम-सा बैठा था। बाप मां को क्यों पीट रहा है यह उसकी अबोध बुद्धि नहीं समझ पा रही थी ?

सरमा ने धीमे से कहा "वह मैंने दूध वाली को दे दिया उसने बच्चू के लिए दूध बन्द कर दिया था।"

"झूठी कहीं की जाकर तू ने किसी को दिया ।"

सरमा बिफर पड़ी। झपटकर उठ खड़ी हुई, "खबरदार, यदि मेरे धर्म पर दोष लगाया तो! बस मैं औरत का धर्म निभा रही हूं। तुमसे नाता तोड़ना नहीं चाहती हूं इसका मतलब यह नहीं कि तू मेरी गैरत को उछालता रहे। चुपचाप

खोया बस।

वकील सरजू को अच्छी तरह याद हो उठा—उसका मौसा सो गया था उसकी मौसी बड़बड़ा रही थी 'मैंने तेरे लिए बिरादरी से झगड़ा मोल लिया काला कपड़ा ओढ़ा, बेशर्म बनी और तू तू मुझे जानवर की तरह पीटता है। धिक्कार है तुझे!" वह सिसक पड़ी। उसने अपने अपाहिज बच्चे को सीने से लगा लिया—'यदि अब मैं तुझे छोड़ दूंगी तो लोग मुझे प्रेम की मारी नहीं छिनाल कहेंगे। मुझ पर थूकेंगे कि यह तो हमेशा ओढ़ने बदलती रहती है। बस यही मुझे रोके हुए है। फिर मैंने तुमसे प्रेम किया है। प्रेम दुख से बदलता थोड़े ही है।"

और इस प्रकार हर दिन बीत जाता था।

वकील सरजू की स्मृति शैशव की ओर उड़ी। जब उसकी मौसी ने विद्रोह की परिधि को लांघ दिया था। उसने जैंतू के लिए अपने पति को नापसंद किया, उस पर कई झूठे लांछन लगाए, पति की विधवा का काला कपड़ा ओढ़ा तीन सौ रुपए अपनी जेब से दंड दिए और जैंतू की बनी। इतनी आपदाओं के बदले उसे अपना प्रेमी मिला। प्रीत बीत गई थी।

वकील सरजू को अपनी मौसी का एक वाक्य बार-बार याद हो उठता था। उसने एक दिन दुख से कहा था कि नारी नारी है और जो नर नारित्व को संतोष न दे सके वह नर नर नहीं। उसे एक नारी के जीवन पर अधिकार करने का कोई हक नहीं है।

और जैंतू का ईमान सुरगा को पाकर बहक गया। उसमें उसकी जाति के सभी अवगुण घर करने लगे जो प्रायः घुन की भांति इन पिछड़ी जातियों में लगे हुए हैं। धीरे-धीरे प्रेम कम होता गया। नशा बढ़ता गया। इस बीच सुरगा ने एक अपाहिज बच्चे को जन्म दिया। अपाहिज बच्चे ने उसको शक्तिहीन बना दिया जैंतू के साथ अटूट बन्धन में बांध दिया। अपरिचित व्यथा और असह्य प्रताड़नाएं सहकर भी सुरगा जैंतू को सुख-संताप दिया करती थी। जैंतू ने उसकी सारी पूंजी नशे में उड़ा दी पर दुखी नहीं मौसी। पड़ोसिन औरतें ताज्जुब से सकते में आ जाती थी कि इस सुरगा को क्या हो गया है? यह अपने पति को जान बूझकर माथ की

और क्यों भेज रही है ? वह उसे रोकती क्यों नहीं ? पर सुरमा शांत थी । वह और उसका अपाहिज बच्चा ! पराजय और अटूट बन्धन ! वह हार गई उसकी सारी भंवर में फंसी तरणी की तरह लहरों के सम्भ्रम पर ही रह गई ।

सरजू का अन्तर अपनी मौसी की दयनीय दशा देख-देखकर पीड़ित होता था । कभी-कभी उसे अपने बाप पर भी गुस्सा आता था । क्यों उसके बाप ने यह निर्णय लिया था "सरमा को यदि हम जैतू के घर में नहीं डालेंगे तो वह लुक-छुपकर कुकर्म करेगी जगह-जगह मुंह मारती फिरेगी यह बिरादरी के लिए बड़े शर्म की बात होगी इसलिए सरमा हर्जाना देकर जैतू के घर जा सकती है । यही न्याय है यही इन्साफ है।

वकील सरजू ने शांति से सांस लिया जैसे उसने एक कहानी समाप्त कर ली हो ।

रात का गहरा आवरण संसृति पर छा गया । तारों की दीप्ति विशेष मुखरित हो गई । शून्यता स्वयं सांय-सांय कर रही थी । वह शून्यता उसके एकान्त मन में तन्मय हो गई । दूर, बहुत दूर आरण्यक भूमि और पार्वत्य भूमि का सम्पात एक होकर भयानक तिमिर का सर्जन कर रहा था ।

यह अन्धकार और यह एकांत ! यह प्रवृत्ति और मर्मान्तक व्यथा । मिरिजा" मिरिजा ! वह विचलित हो उठा । उसका अंग-अंग अव्यक्त पीड़ा से चिल्ला उठा । उसने अपने दोनों हाथों से अपना सिर पकड़ लिया । वह मौन क्रन्दन कर उठा—"मिरिजा "मैं क्या करूं ? तेरे बिना मेरा यह जीवन श्मशान है एक जलता अंगार बन चरिता !"

तभी पप्पू के रोने की ध्वनि ने सरजू का ध्यान भग कर दिया । वह शीघ्रता से नीचे उतर आया । बीना पप्पू को दवा पिला रही थी । दवा कुछ कड़वी थी । इसलिए पप्पू को जरा दबाकर दवा पिलानी पड़ रही थी ।

सरजू को देखते ही बीना सव्यंग बोली "लगता है कि आपसे पेट ने अधिक दोस्ती नहीं निभाई ?

"मतलब ?"

"भूख भग गई होगी ?"

"नहीं मैं गप्पू को देखने के लिए चला आया हूं। वह रो क्यों रहा है?" वह बोला और गप्पू के सन्निकट आ गया था।

"यह काम मेरा है। मुझे आप तनख्वाह ही इसी बात की देते हैं कि गप्पू रोए नहीं हंसे। वह सदा प्रसन्न रहे। उसे अपनी मां की याद न आए।" उसने इतना सबकुछ झटपट बोल दिया।

"हां-हां!"

"फिर भी उसे अपनी मां की याद आती है। मां को भूल जाना उसके लिए आसान थोड़े ही है? बाबू जी! मां चाहे अपने बच्चे को कितना ही दुख क्यों न दे पर बेटे के मन में उसके प्रति ममता कम नहीं हो सकता। जब कि उसके घर में उस बच्चे की कोई दादी-फूफी न हो।"

"तुम ठीक कहती हो। मेरे बचपन की एक घटना मुझे याद हो आती है। मेरे पड़ोसी पंडित बाबूराम के लड़के से एक बार मेरा झगड़ा हो गया था। उसने मुझे पीटा था। फिर भी उसका बाप लट्ठ लेकर मेरे घर पर आ गया। हालांकि बाबूराम की बीबी बहुत ही दयालु और भली थी। वह हम सब बच्चों को एक-सा प्यार करती थी। पर पंडित रावण की तरह मेरे मां-बाप को खीस गालियां देने लगा। मुझसे नहीं रहा गया। मैं बिगड़ पड़ा। जानते हो मां ने मुझे उल्टा पीटा। मेरे मन में घृणा भर उठी। क्योंकि मां ने कहा था कि हम शूद्र हैं नीच हैं, पंडित जी का विरोध और अपमान करना भी हमारे लिए असम्भव है। लेकिन वह अपमान की आग मुझमें समिधा की भांति जलती रही। मैं जब वकालत पास करके पुनः शहर में आया तब बाबूराम का बेटा एक चोरी के अपराध में पकड़ा गया था। हालांकि वह अधिक दोषी नहीं था फिर भी मैंने झूठ-सच करके उसे दो वर्ष का कठोर दंड दिला दिया। उन दिनों पंडिताइन मर गई थी। मेरी मां को इससे बड़ा सदमा पहुंचा। उसका कहना था कि ब्राह्मण के बेटे को दंड दिला-कर हमने अपना लोक-परलोक दोनों बिगाड़ लिए पर मुझे उसकी जरा भी चिंता नहीं थी। मुझे सुख मिला असीम सुख! इसके बाद न मालूम क्यों मां मुझसे कटी कटी-सी रहने लगी। पश्चाताप उसके अवचेतन मन की गहराइयों में घुस गया। वह ग्लानि से पीड़ित रहने लगी।

"मुझे वहाँ का वातावरण रुचिकर नहीं लगा। माँ का गंभीर मौन मेरे लिए पहेली था। एक दिन मैं ऊबकर वह शहर ही छोड़ आया। माँ के प्रति मेरे मन में घृणा ने जन्म ले लिया था। यह घृणा किस रूप में मेरे मन में पनप रही थी उसका विश्लेषण मैं आज तक नहीं कर सका लेकिन मेरा अन्तःकरण उस बात को आज भी बार-बार दोहराता है कि माँ का वह व्यवहार अच्छा नहीं था। उस घटना के बाद माँ ने मुझे कभी भी चिट्ठी नहीं लिखी और न ही उसने कभी मुझे आशीर्वाद ही पहुँचाया। असफलता मैंने कई बार पुछवाया तो माँ ने अत्यन्त रुखाई से उत्तर दिया कि वह चुप रहे। देखो उसने एक 'बामन' के बेटे को जन लिखवा कर कितना बड़ा गुनाह कर लिया है। वह अब बहुत बड़ा आदमी हो गया है। वकील साहब! तभी तो उसने इस गरीब माँ का कहना नहीं माना। हम धोबी हैं और वह वकील!

'एक अजीब-सी जलन उसके अन्तर में उत्पन्न हो गई और वह जलन मृत्यु पर्यन्त उसके दिल से नहीं गई।

"जब वह मरने लगी तब मेरे बाप ने लोक-लज्जा के भय से मुझे तार दिया। मेरे मन में भी माँ के प्रति कठोरता जन्म ले चुकी थी। लेकिन तार पाकर मैं अपने आपको दुर्बल पाने लगा। ममता का प्रभाव मेरे अंग-अंग में लहरें मारने लगा। मैं सब सह सका और सीधा माँ के पास चला गया।

"माँ अन्तिम साँसें ले रही थी। मुझे देखते ही वह टूटते हुए स्वर में बोली 'सरजू प्रायश्चित करना वह ब्राह्मण का बेटा था, यह पाप तुझे चैन नहीं लेने देगा। ब्राह्मण देवता है, देवता'। वह मर गई।

"मीना माँ की ममता इतनी महान होती है कि जब वह पुकारती है तब व्यक्ति बन्धनहीन होकर उसकी ओर भागता है। मैं भी भागा। उस घृणामयी माँ के समस्त दोष भुलाकर मैं उसके मरणकाल पर पहुँच ही गया।

मीना काफ़ी देर स्तब्ध-सी रही। बब्बू तन्द्रितावस्था में झूलने लगा था। उसको सुलाकर मीना व्यंगभरी मुस्कान अपने होंठों पर लाती हुई बोली "लोक-लज्जा के भय से आपको असमंजस में डाल दिया। आपके हृदय में ममता नहीं थी, जिस प्रकार आपके बाप ने लोक-लज्जा के भय से आपको तार दिया उसी

प्रकार आप लोक-लज्जा के भय से अपनी मां के पास पहुंच गए थे। चाहे आपकी चेतनता इसे स्वीकार न करे पर अचेतन मन में लोक-लज्जा का भय' ही प्रधान था। हम बहुत-से काम आन्तरिक आज्ञा से भी करते हैं जिसका हमें पता नहीं चलता।"

सरजू मुस्कराकर बोला "तुम बड़ी विचित्र हो। एक बात कहकर स्वयं उसको काट देती हो।

'आप में और मन्नू में बहुत अन्तर है। उसके समक्ष अभी एक भारी पूर्ण स्नेह लेकर आई थी और वह थी—उसकी मां। वह क्षण भर रुकी "लेकिन आप बात का प्रसंग पकड़कर बहुत अच्छी कहानी कहना जानते हैं। इस प्रकार की बातें किसी के अन्तर में आपके प्रति स्नेह उत्पन्न नहीं कर सकतीं।"

"मुझे किसी का स्नेह नहीं चाहिए।" वह स्पष्ट होकर बोला।

"यह दंभ है। अर्थहीन अहम्। मनुष्य का यह मिथ्या अभिमान है कि वह सत्य को अस्वीकार कर अपने को असाधारण साबित करे अथवा आवेष्टित परिस्थितियों से मुक्त बताए। मैं जानती हूं कि आप प्यार के भूखे हैं। मां की जुदाई गिरिजा की असमय मृत्यु और अन्य किसी युवती के प्रेम से वंचित रहकर आप प्रेम के प्रति निरपेक्ष रह ही नहीं सकते। वीणा ने अत्यन्त दृढ़ता से कहा।

"मैं अपनी सारी अशान्ति इस मासूम को देखकर भूल जाता हूं। इसे मैं जब आलिंगन में आबद्ध करता हूं तो स्वर्गीय सुख का आनन्द पाता हूं। पत्नी की मृत्यु के उपरान्त उसका बच्चा ही उस पति की सबसे आनन्ददायक धरोहर होती है।"

वीणा ने सरजू के मुख को गंभीरता से देखा और उसे निरन्तर देखती रही। सरजू एकदम विचलित हो गया। उसकी आंखें स्वत ही झुक गईं।

वीणा क्षिप्र स्वर में बोली 'मनुष्य अपने से छल करने में बहुत आनन्द पाता है। यह आत्मवंचना की परम्परा आधुनिक युग की बहुत प्रचलित परम्परा बन गई है। इसका भी गहरा अध्ययन होना चाहिए ताकि मनुष्य के मन के अभ्यन्तर को पहचाना जा सके। "आप अपने बच्चे को बहुत प्यार करते हैं। गिरिजा का अभाव इस बालक की मधुर मुस्कान पूर्ण करती है मैं इसे नहीं मानती। मैं जानती हूं कि गिरिजा का अभाव ही आपके ध्यान को इस बच्चे की ओर आकर्षित किए

हुए हैं। वह मतृप्ति नहीं होती तो इस बच्चे की स्मृति भी नहीं होती। यह कदूक्ति भवश्य है पर इसमें वापमूसी नहीं।

सरजू का चेहरा उदास हो गया था। वीणा ने उसके अन्तर के मर्म को समझ लिया था। "वीणा ने उसके चेहरे की उदासी और आँखों में झलकती पीड़ा को देखकर आनन्द का अनुभव किया। सन्तोष की सांस ली। मैं अपराजेय हूं। उसने मन ही मन कहा।

सरजू पराजित हो गया।

वीणा ने शतरंज जमीन पर बिछा दी। तकिया लगाकर मप्पू पर चादर डालते हुए उसने कहा "आप जाकर आराम कीजिए।

और तुम ?

"मैं इस चादर और शतरंज पर पड़ जाऊंगी।

"और यह बिस्तर ?'

"इसे आप किसी को दान कर दीजिए।"

'तुम्हारे मन को मैं नहीं समझ सकता। तुम प्रकृति के अमोघ नियमों से परे हो। आत्मपीड़न में सुखानुभूति पाती हो।"

"जिस प्रकार आप सात्विक ऐतिहासिकता में अपने आपको बैर्य देते रहते हैं।"

सरजू चुप होकर वहां से लौट आया।

वीणा केवल शतरंज पर बैरागिन की भांति सो गई।

उस दिन का मादक प्रभात—

अलसाया हुआ सरजू ज्योंही बिस्तरे से उठा त्योंही मप्पू ने आकर यह खबर दी कि चक्र बाबा आया है।

"चक्र बाबा ! सरजू चौंक पड़ा। भागकर नीचे आया। चक्र के गले लगा।

"कब आए यार ?" उसने बड़े प्यार से कहा।

"बस अभी।"

"बिस्तर कहां है ?

"किसी ने चुरा लिया।

"पुलिस में खबर दी ?"

"जरूरत क्या है ? जो होना था वह तो हो ही गया । अब उसके लिए परेशान होना व्यर्थ है। चिन्तित होना निरर्थक है ।"

"क्या सामान था ?"

"छोटे ने थोड़ा बहुत रुपया रख दिया था। छोड़ो न वकील साहब इस झंझट का। अरे, पप्पू बेटा कहां है ?

पप्पू बाबा के पास आ गया। पप्पू ने बाबा की दोनों मूंछों को कौतूहल भरी दृष्टि से देखकर कहा "बाबा इन मूंछों को साफ कर दो।"

"क्यों ?"

"अभी तुम मुझे कहोगे पप्पू बेटा चुम्मा दो और मैं कहूंगा कि नहीं दूंगा।" उसने मचलकर कहा।

"अरे बेटा क्यों ?"

"यह मेरे चुभती हैं।"

इन दोनों की बात को सरजू ने बीच में ही भंग कर दिया "तुम्हारे लिए चाय लाऊं ?"

"जैसी तुम्हारी इच्छा।"

"टोस्ट ?"

"जो तुम्हारे पास है, ले आओ। मुझे पूछने की कोई जरूरत नहीं है।"

सरजू चला गया।

पप्पू ने तुरन्त अपनी बात का सिलसिला जोड़ा "फिर काट दूं तुम्हारी मूंछें बाबा !"

"पर कैंची कहां है ?"

"वह रही शीशे के पास।" संकेत से पप्पू ने कैंची को बताया। बाबा कैंची उठा लाया। देखते-देखते मूंछें गायब।

पप्पू ने लपक कर बाबा का चुम्बन ले लिया।

तब तक सरजू लौट आया था। बाबा की मूंछें न देखकर वह तनिक गुस्से में भर उठा "यह क्या कर डाला बच्चों की हर बात मान ली जाएगी तो वह जिद्दी

हो जाएगा।"

"नहीं-नहीं मनुष्य को दूसरों से मित्रता बढ़ानी चाहिए, मित्रता ही प्यार को जन्म देती है अपनत्व बढ़ाती है। हम यदि इसके अनुकूल बन जाएंगे तो यह हमारे अनुकूल बन जाएगा। दोनों की अनुकूलता हमें अटूट बन्धन में बांध देगी।" चक्र वाक्य समाप्त करते-करते अत्यन्त गम्भीर हो गया। उसकी गम्भीरता के समक्ष सरजू चुप रहता था।

नौकरानी पिन्ची चाय और टोस्ट ले आई थी।

चाय को मेज पर रखकर वह जाने को तैयार हुई। चक्र ने उसे रोका "वीणा कहां है?

"अपने कमरे में।"

"क्या कर रही है?"

"पढ़ रही है।"

"उसे जरा ऊपर भेज दे। पिन्ची चली गई। उसके जाते ही सरजू ने कहा "अपने आपको बहुत सताती है। स्वास्थ्य के प्रति ऐसी क्रूरता ठीक नहीं है।

"यह न किसी की मित्र बन सकती है और न ही कोई इसके अनुकूल हो सकता। हम करुणा से इसे देखते हैं। जब करुणा से देखते-देखते थक जाएंगे तब इसके प्रति हम उदासीन हो जाएंगे। किसी के प्रति मेरी उदासीनता ही मेरी उपेक्षा है। "काम तो अच्छा करती है न?"

"हां पप्पू आजकल थोड़ी-बहुत अंग्रेजी भी बोल लेता है।"

"गुड हां तुम ससुराल जानेवाले थे न?"

"आज ही चला जाऊंगा। पप्पू की नानी पप्पू को बहुत याद करती है। मिरिया की मृत्यु के बाद"।"

"प्रकृति का अटल नियम है—जीवन और मरण। आदमी पैदा होता है और मर जाता है। इसके लिए सन्ताप करना उचित नहीं है।" चक्र इतना कहकर टोस्ट खाने लगा।

पप्पू ने भी एक टुकड़ा उठाया।

तभी वीणा आ गई। चक्र को नमस्कार करके बैठ गई।

"कहो अच्छी हो ? कर्तव्य अच्छी तरह निभा रही हो न ?"

"हाँ जीने की इच्छामात्र ही बन्धन है। मैं समझती हूँ कि मृत्यु का अधिक पीड़ाजनक भय इस बन्धन की कई पीड़ाओं से अधिक दुखद है। फिर भी मनुष्य इन अनेक पीड़ाओं को वहन करना उचित क्यों समझता है ? सिसक-सिसककर जीने में सुख है।"

"जीने की प्रवृत्ति मृत्यु की प्रवृत्ति पर सदा छाई रहती है। इसलिए प्राणी जीकर अनेक संताप व आपदाएं उठाता है।" चक्र ने अपनी नीली गहरी आँखें उस पर जमा दीं। वीणा की जिज्ञासा भरी आँखें झुक गईं।

"सुदर्शन का क्या हालचाल है ? वीणा ने बात को बदला

"एक सम्राट् का सुख उसे उपलब्ध है। जब कहता हूँ वीणा जब मैं उसके सुख में अपने को तादात्म्य करता हूँ तब मधुर आनन्द का अनुभव करता हूँ। सोचता हूँ कि मैंने अपनी तृष्णा का वैभवोन्मुख तृष्णा का कितनी सहजता से अंत कर लिया है। सुदर्शन, मेरा छोटा भाई है न ? मैं जानता था कि इस सम्पत्ति का सांप कभी हमारे सौहार्द को डस लेगा। धीरे-धीरे मन में धन-दौलत के प्रति घृणाहीन विरक्ति होती गई और एक दिन सुदर्शन को सर्वस्व संभालकर मैं मुक्त हो गया।"

सरजू का मुवक्किल सेठ हरप्रसाद आ गया था। वह उससे बातचीत करने के लिए चला गया। सप्पू को वीणा ने आदेश दे दिया कि वह जाकर अपना पाठ याद करे।

वीणा ने एकान्त पाते ही पूछा "भैया सरजू बाबू आदमी भले हैं कभी कभी मैं उन्हें अत्यन्त कठोर उत्तर दे देती हूँ फिर भी वे शांत रहते हैं।"

चक्र उसके इस कथन पर मुस्करा पड़ा "उसकी शांति उसके अभाव की पूर्ति करती। मिदिरा का अभाव उसके लिए असह्य है। फिर एक वकील जैसे तर्कशील व्यक्ति की ओर कौन लड़की आकर्षित हो सकती है ? यदि सरजू की प्रेयसि व्यर्थ में मुस्करा भी दे तो घंटों उस पर एक मनोवैज्ञानिक की भांति विचारता रहेगा। वह हर बात को भावना से नहीं वैज्ञानिक भाषा में कहेगा। "और तुम जानती ही हो कि प्रेम भरे दो हृदय सुन्दर काल्पनिक ऐन्द्रिकता में भटकना

अधिक पसंद करते हैं। उनकी भाषा भी पृथक होती है। इसलिए तुम्हारी कठोर भाषा और उसके तर्कों में एक समन्वय-सा हो जाता है। न उसका कहा तुम्हें अधिक अखरता है और न तुम्हारा उसे। मेरी समझ में तुम दोनों एक दूसरे को पीड़ा पहुंचाकर सुख पाते हो तो आश्चर्य नहीं।"

बीना के अन्तःकरण में आन्दोलन-सा हो उठा। चक भैया ने यह कैसी बात कह दी? सरजू बाबू और मुझमें समता? नहीं ऐसा नहीं हो सकता। यह मेरी पराजय होगी। मेरी प्रतिज्ञा का खंडन होगा। नहीं नहीं। वह प्रगट होकर चक से बोली 'मुझे कहीं नौकरी दिला दो मैं किसी के साथ समन्वय सामंजस्य और समता उत्पन्न नहीं कर सकती।"

चक ने उठते हुए कहा 'मनुष्य में जब आत्मवंचना की प्रवृत्ति कम होती है तब वह मानवीय भावनाओं की ओर बढ़ता है। परिवर्तन अवश्य होगा क्योंकि जीने की प्रवृत्ति बड़ी समृद्ध होती है। यदि तुम हठ पर अड़ी रहीं तब जीवन अन्धेरे की ओर बढ़ जाएगा।

दोपहर की चढ़ती धूप।

बीना स्थिर भाव से निष्कम्प प्रदीप-सी सरजू के घर में एकाकी बैठी थी।

बसंत-पुष्पों की आमरण धारिणी धरित्री खिड़की की राह अत्यन्त शोभायमान हो रही थी। नव किसलय-दल उस श्री में वृद्धि कर रहे थे। नयनाभिराम दृश्य, हृदय मोहक ऋतु।

बीना और सूना घर।

आज सरजू 'गप्पू' को लेकर अपनी ससुराल चला गया था। इसलिए बीना ने उपवास रखा। उपवास से उसके मन को गहरी शांति मिलती थी एक अज्ञात सुख प्राप्त होता था।

बीना उस सुख में तन्मय थी।

तभी मुक्त हास्य से उसका शून्य अन्तर झनझना उठा। उसने लपककर बाहर की ओर झांका—

"पड़ोसी सज्जन की नवेली दुल्हिन पति के संग अठखेलियां करके अपने सुख

मधुरिम हास्य से एक सुन्दर लोक की सृजना कर रही है। उसके पति ने उसका कोमल हाथ पकड़ रखा है और वह मादक चितवन से अपने पति को देख रही है।"

उसकी आत्मा कराह उठी। उसके अन्तर के दुःख के सातों सागर मचल उठे।

'सुखी! पूर्ण सुखी!' उसने हठात् सोचा 'ये क्यों हंस रहे हैं? ये क्यों आनन्द में आत्मविभोर हो रहे?'

मीना की इच्छा हुई कि वह यहीं से विषाक्त तीर फेंककर इनमें से एक की आत्मा को बेध दे ताकि इनके कहकहे अश्रुओं के छींटों में बदल जाएं।

पर वह ऐसा नहीं कर सकी। वह सिर पकड़कर बैठ गई।

वही कहकहे, मधुर संगीत भरे, मुक्त!

मीना का अतीत साकार हो उठा।

एक दिन वह भी दुल्हिन बनकर आई थी।

सौन्दर्य की सृष्टि को अपने घूंघट में छुपाए, हरे रंग के प्रकाश में वह बसंत श्री-सी लग रही थी। यौवन से आक्रान्त उसका आन्दोलित मानस बार-बार चौंक पड़ता था पर उसका वह चौंकना भ्रमपूर्ण था। पदचाप का भ्रम! किसी के आगमन की तीव्र उत्कंठा में स्वप्नाविष्ट की भांति छल।

उसमें एक चाह थी—मुग्धा-सी पवित्र।

यामिनी का तारों भरा आंचल झलमला रहा था। बरामदे से विस्तृत नभ का सौन्दर्य लोक स्पष्ट दृष्टिगोचर हो रहा था।

मीना क्षण भर के लिए नेत्रोन्मीलन करके बैठी रही जैसे वह कोई मधुर कल्पना कर रही हो। फिर वह उठी और बरामदे में आकर खड़ी हो गई।

बड़े-बड़े दीप्त तारे उसे सुभग-से प्रतीत हुए।

तभी पीछे से पदचाप आई। उसने घूमकर देखा—वे　वे　थे!

वह लज्जा से सिहर उठी। मयंक-मुख पर आवरण कामना तक झूम गई। तब उसने अपने मुख के सौन्दर्य-लोक को हाथों के सम्पुट में भर लिया। खड़ी हो गई—निष्प्राण-सी।

उसका पति प्राण और परमेश्वर!

दोनों आमने-सामने ।

उमेश ने मुस्कराकर कहा "मैं चांद की ओर देखता हूं और तुम भीतर जाकर अपने को आंचल में लुप्त करने का प्रयास करना । मैं आऊंगा तुम शर्माना मैं तुम्हें स्पर्श करूंगा और तुम सिहरन के मारे पानी-पानी हो जाना । और उमेश धीरे से हंस पड़ा । वीणा भीतर की ओर भाग गई ।

उमेश वीणा का बहुत सम्मान करता था । दाम्पत्य जीवन का आनंद ! आनंद के प्रवाह में वे दोनों तिरोहित थे ।

उमेश उन दिनों बी० ए० में पढ़ता था ।

वीणा ने विवाहोपरान्त पढ़ना छोड़ दिया था । इन्टर वह पास कर चुकी थी । बी० ए० इसलिए उसने ज्वाइन नहीं किया क्योंकि सास का कहना था कि उसकी बहू कहीं नौकरी थोड़े ही करेगी कि वह बी० ए० एम० ए० करती रहे । वीणा को पढ़ाई छोड़ते हुए दुख जरूर हुआ लेकिन सास को वह नाराज करना नहीं चाहती थी । इस पर उमेश ने भी कोई विशेष उत्सुकता और जिज्ञासा नहीं दिखाई कि उसकी पढ़ाई जारी रहे ।

वीणा अपनी सास मंगोत्री का घर-गृहस्थी के काम में हाथ बंटाने लगी । हर तीसरे-चौथे वह अपने पिता के घर चली जाया करती थी ।

वीणा का पिता शहर का अत्यन्त प्रतिष्ठित 'सटोरिया' था । फीचर्स के सौद से लेकर वह चांदी सोना और शेयरों की लेन-देन बड़े पैमाने पर करता था । अतुल सम्पत्ति का स्वामी था । अत उमेश की मां मंगोत्री ने विशेष सौन्दर्य का मूल्यांकन न करते हुए यह रिश्ता स्वीकार कर लिया । हालांकि मंगोत्री स्वयं लेन-देन का व्यापार करती थी । अपने पति की मृत्यु के पश्चात उसने अपने पति के व्यापार को बढ़ाया ही । पति अपनी आसामियों की दरिद्रता तथा विवशता देखकर दस-बीस रुपए कभी-कभी छोड़ भी दिया करता था पर मंगोत्री एक पाई भी नहीं छोड़ती थी । उसका कहना था कि व्यापार व्यापार है । लेन-देन ही उसका मूल है । यदि मूल के प्रति जरा भी असावधानी एवं उदारता दिखाई कि सारा ढांचा चौपट हुआ ।

वह ढांचे को जरा भी चौपट करना नहीं चाहती थी अतः वह दिन प्रति दिन

कठोर हो रही थी। कभी-कभी यह कठोरता उमेश और बीना के प्रति भी फूट पड़ती थी।

तो भी ब्याज-बट्टे का धंधा करने वाली गंगोत्री बीना के प्रति आवश्यकता से अधिक दयालु थी। उसके सुख और संतोष का पूर्ण ख्याल रखती थी।

जिस प्रकार एक दूरदर्शी की तीव्र प्रज्ञा होती है, उसी प्रकार गंगोत्री की थी। बीना के बाप की अतुल सम्पत्ति पर उसकी बाज-सी तीखी दृष्टि जमी हुई थी। इसलिए वह कभी-कभी बीना को लेकर उमेश को भी डांट दिया करती थी।

संतोष की बात कहिए।

बीना चौथे महीने ही गर्भवती हो गई।

फिर क्या था?

गंगोत्री अपार प्रसन्नता में नाच उठी। आगामी खुशियों की कल्पना मात्र ने बीना के पिता गोविन्दप्रसाद को मस्ती में ला दिया। उन्होंने अपने दोहिते के लिए हजारों रुपयों के जेवर बनने के लिए दे दिए। हीरों की तीन छोटी-छोटी अंगूठियां दो सोने की जंजीरें। एक भारी सोने का कमरबन्द। पांवों में चांदी की पैजनियां आदि।

ईश्वर सुख का सागर मनुष्य के चारों ओर फैलाता है ताकि वह सुख का आकंठ उपभोग करे।

गंगोत्री ने भी माह के बाद ही पोते के दर्शन किए। इधर गोविन्दप्रसाद ने सट्टे में पांच लाख कमाए। फिर क्या था? बधाइयां बांटी गईं। ढोलकियां इक्कीस इक्कीस दिन तक लगातार बजती रहीं। उस आनन्दोत्सव में संगीत और अनुराग का झरना बहता था।

इस प्रसन्नता में पहली बार सुदर्शन कलकत्ता से आया। वह भी उसे एक अमूल्य सोने की जंजीर दी कि यह अपने मित्र उमेश के बेटे को पहना आए।

वह उमेश के यहां आया।

बीना अपने कमरे में बैठी-बैठी अपने बच्चे को झुनझुना झुला रही थी।

गंगोत्री मुनीम मायाराम से अपनी आसामियों के समय-असमय पर्चे बनवा रही थी कि किस आसामी में कितना ब्याज बाकी है?

सुदर्शन को देखते ही गंगोत्री विहँस कर बोली, "क्यों रे सुद्दू, तू कब आया ?"

"कल ही आया हूँ, उमेश ने पत्र बहुत देरी से दिया। अरी मौसी, मुझे तो तार मिलना चाहिए।"

"तुम्हें उमू ने तार नहीं दिया ?"

"नहीं।"

"कहाँ है वह दुष्ट ? मुझे पूरे एक माह का भरोसा दिला दिया।"

"मौसी वह कालेज गया है।"

"आने दे फिर मैं उसकी खबर लूंगी। तू भीतर आ और अपने भतीजे को देख जा। भगवान ने तुझे चाँद-सा प्यारा भतीजा दिया है।" क्षणिक मुग्धता के बाद गंगोत्री ने उच्च स्वर में कहा, "बहू, देख सुद्दू आया है, उमेश का दोस्त, इसे अपना देवर ही समझना। अरे भीतर क्यों नहीं आता ?"

सुदर्शन सहमता हुआ भीतर गया। एक अपरिचित नारी के समक्ष जाते हुए जो झिझक एक पुरुष में होती है वही सुदर्शन में थी।

उसने हाथ जोड़कर नमस्कार किया। उत्तर में वीणा ने स्मित रेखाओं के साथ हाथ जोड़ दिए।

यह पहला अवसर था जब सुदर्शन ने वीणा को देखा। हालांकि इसके पूर्व उमेश द्वारा पत्रों में वह वीणा की भावुकता और उसकी तीक्ष्ण बुद्धि की काफी प्रशंसा पढ़ चुका था।

"बैठिए।" वीणा ने मधुरता से कहा।

सुदर्शन बैठ गया।

"आपके लिए चाय बनाऊँ ?"

"नहीं।"

"क्यों ?"

"अभी पीकर आया हूँ।"

"तो क्या हुआ ?"

"मुझे अधिक चाय अच्छी नहीं लगती।"

"क्यों जी ?" वीणा गहरे अपनत्व से कटाक्ष सदृश देखती हुई तपाक से बोली,

"यहां तो चाय लोग बहुत अधिक पीते हैं। चाय तो आपको पीनी ही होगी नहीं तो ये कितना बुरा 'फील' करेंगे।

'फील' उसने इस शब्द को दोहराया। इस शब्द ने एक विशेष प्रतिक्रिया सुदर्शन के मस्तिष्क में की।

"फिर आपकी मर्जी।" वह प्रगट होकर बोला "मैं पहले दिन झगड़ा मोल लेना नहीं चाहता और फिर मैं इस बात को मानने वाला हूं कि मित्रता पक्की रखनी हो तो मित्र की बीबी पर अधिकार रखो उसे प्रसन्न रखो उसकी हां में हां मिलाओ।"

बीणा मुस्कराकर चली गई।

पीछे से सुदर्शन ने उमेश के लड़के को उठाया और उसे एक हजार की सोने की जंजीर पहना दी। उसमें एक हीरा पान के आकार में जड़ा हुआ था।

बीणा चाय का सामान लेकर आई।

सुदर्शन को बच्चे को रमाते देखकर मन्द-मन्द मुस्करा पड़ी। पर उसकी दृष्टि ज्योंही जंजीर पर पड़ी त्योंही वह विभोर हो गई। वह चाय रखकर तुरन्त बच्चे को लेकर गंगोत्री के पास गई। जंजीर दिखाई।

गंगोत्री भागी-भागी आई। सुदर्शन की बलाएं लेती हुई बोली "अरे सुदू इसकी क्या जरूरत है? अरे यह सब की भूख है। देने में ही उसको आनन्द आता है। बहू चाय तो बनाकर इसे पिला।"

बीणा चाय बनाने लगी।

सुदर्शन बच्चे का गोद में लेकर खेल रहा था।

गंगोत्री बीणा को यह बता रही थी कि सुदर्शन के खानदान से हमारे खानदान का बहुत ही पुराना सम्बन्ध है। हालांकि हम दोनों के बीच दूर का भी कोई रिश्ता नहीं है लेकिन प्रेम इतना है कि हम सगे परिवारों-से लगते हैं। और वह प्रेम ही सबसे बड़ी वस्तु है। जो प्रेम से पुकारे, वही अपना है।

चाय बन गई थी। उधर अकस्मात् न मूत की धारा बहा दी। मूत की धार सुदर्शन की पैंट को भिगोकर नीचे फैल गई।

सुदर्शन—'ओ—रे रे ऽ' कहकर उठ खड़ा हुआ।

बीणा मुक्त हास कर उठी।

दादी भी पोते की इस हरकत पर किलक उठी।

सुदर्शन ने दोनों को किंचित रोष से देखा। उस रोष में घृणा कम कुहल अधिक थी। वीणा ने अपनी हंसी को छुपाने के लिए मुंह के आगे आंचल का पल्लू दे लिया।

गंगोत्री मुख उपहास से बोली "अरे बेटा क्यों छछून्दर की तरह नाच रहे हो छोटा बच्चा देवता स्वरूप होता है, इसके मूत्र से तुम पवित्र हो गए। यह तो गंगा जल के समान होता है।

"फिर मौसी एक चुल्लू पी क्यों नहीं लेती ?" सुदर्शन ने कहा।

वीणा ने अब तक मूत्र साफ कर लिया। घृणा से मुंह बिचकाकर बोली "छि छि" "ऐसी बात कहते आपको शर्म नहीं आती ? कैसे हैं मौसी-मानस ?"

सुदर्शन तुरन्त स्मित बिखेरता हुआ लम्बे स्वर में बोला "भाभी जी यह नाक मटकना सब भूल जाएगी अभी तो बच्चा नम्बर वन ही हुआ है। जरा पांच दस होने दीजिए, फिर इस मिजाज को देखूंगा।"

वीणा के गाल लज्जा से आरक्त हो उठे। वह कुछ नहीं बोली। शर्म से उसने अपनी निगाहें झुका लीं।

गंगोत्री पोते को उठाकर यह कहती हुई चल पड़ी "मैं जरा ददना के यहां जा आती हू। उसे यह जंजीर बता आऊं।"

सुदर्शन चाय पीने में मग्न था। वीणा न जाने किस विचार में खोई हुई थी। उसकी गहरी काली भौंहें धनुषाकार की भी जो अभी तनी हुई थीं। अचानक सुदर्शन मुस्कराकर बोला "भाभी आप इस 'पोज' में बड़ी सुन्दर लगती हैं।

वीणा शर्म के मारे सिहर उठी।

"आपकी चाय ठंडी हो रही है।" सुदर्शन हंसकर बोला। उसकी हंसी में निश्छलता और निर्मालय था। एक ऐसा आकर्षण था जिसने वीणा के मन में हलचल उत्पन्न कर दी। वीणा ने तत्काल सोचा कि यह हंसी उन तमाम हंसियों से न्यारी है। इसमें एक ऐसा निश्छल और भाव है जो यदाकदा कामातुर रमेश के होंठों पर बिखरती है।

और सुदर्शन पुनः एकदम गंभीर हो गया। उसकी पलकें झुक गईं। वह नमस्कार करके चलता बना।

वह चला गया।

वीणा सारा काम निवृत्त करके कमरे में आकर सोफे पर लेट गई। 'तुम बा सुन्दर लगती हो।' यह वाक्य दोहरा-दोहरा कर वह आवास-सी हो उठी। उस यह जानने के लिए कि मेरे मन में बुरे भाव तो उत्पन्न नहीं हो गए हैं अपने अपने मुख को देखा। उसका मुख पूर्ववत् था फिर भी उसे लगा कि जैसे वह पी हो गया। सुदर्शन की दृष्टि उसे कुछ भाई नहीं। उसमें उसे पाप नजर आया पाप काला पाप और अपवित्र!

तब वीणा को कालेज की एक घटना याद हो उठी। वह मैट्रिक उत्तीर्ण कर नई-नई कालेज में आई थी। उपन्यास पढ़ने का विशेषतः रोमांचकारी उपन्या पढ़ने का उसे बड़ा शौक था। हत्या की घटनाएं वह अत्यन्त दिलचस्पी से पढ़ा करत थी। एक दिन उसके हाथ में 'कानन डायल' का एक उपन्यास था। थर्ड इयर पढ़ने वाला मनोज नामक छात्र उसे बड़ा गौर से देखता था। एक-दो बार वीणा व देखकर उसने इशारे भी किए और एक दिन उसने मौका पाकर यह कह डाल "यह रूप और ये बेरुखाई।"

पहले दिन वीणा निरुत्तर रही। वह जानती थी कि कालेज के छात्रों में उच्छृ खलता अधिक मात्रा में आ रही है। लड़कियों के प्रति वे अपने आपको साहसि साबित करने की बड़ी चेष्टा करते हैं। इसलिए वे इस तरह की बातें कर देते हैं उस लड़के के इस कथन ने वीणा के अन्तर् में जरा भी हलचल नहीं मचाई। व दूसरे दिन नई पोशाक पहनकर आई। मनोज उसका इन्तजार कर रहा था। उ देखते ही मुस्कराकर बोला "तुम बड़ी सुन्दर लगती हो।"

वीणा गुस्से में भर उठी।

उसने चप्पल पांव से निकालने का विचार किया पर न जाने क्या सोचकर च चुप हो गई। मुस्कराकर बोली "और मैं क्या लगती हूं?"

अचानक वीणा के मधुर व्यवहार ने मनोज को आश्चर्य में डाल दिया। वा चाह कर भी बोल नहीं सका। उसकी आंखें हठात् झुक गईं।

वीणा ने कहा "भविष्य में आप शिष्टता सीखने का प्रयास करेंगे। ऐसी आशा मैं रखूंगी। नहीं तो कभी आप किसी भली लड़की से सैण्डलों की पूजा कर

जाएंगे । समझे ?"

उस दिन के बाद मनोज ने कभी बीना से छेड़खानी नहीं की और न ही बीना ने उस पर गंभीरता से सोचा-विचारा ही । उसे यह घटना अटपटी-सी लगी । पर आज सुदर्शन ने उसी वाक्य को दुहराकर उसे बेचैन कर दिया । वह बड़ी देर तक अन्तर्द्वन्द्व में तड़पती रही । वह चाहती थी कि उसका ध्यान सुदर्शन से हट जाए पर वह हटाने में सर्वथा असफल हो रही थी । सुदर्शन उसकी मधुर मुस्कान उसका मासूम बदन एक-एक करके उसके अन्तराल में बसने लगे—न चाहते हुए भी ।

इसके पश्चात् वह दिन भर उद्विग्न-सी रही । चाहकर भी वह सुदर्शन की मधुर मुस्कान को नहीं भुला सकी ।

संयोग की बात उस दिन उमेश भी कालेज से सीधा ही सिनेमा देखने चला गया था । उसकी अनुपस्थिति ने बीना को विचित्र अनुभव दिया । वह भयभीत होने लगी । उसे लगा कि उसके अन्तर में घोर तिमिर का साम्राज्य है और उसका पांव फिसल रहा है । वह तुरन्त सम्भलने की चेष्टा करने लगी ।

उमेश आ गया था ।

जैसी उसकी सदा की आदत रही । उसने उसे आलिंगन में आबद्ध करके प्यार से मिश्रित स्वर में कहा, "आज तो तुम विचार पर हो । क्या बात है ?"

बीना चौंक पड़ी । हालांकि उमेश ने गहरी आत्मीयता से यह वाक्य कहा था पर बीना को लगा कि वह व्यंग से भरा है । उसकी निश्छल मुस्कान में आज विद्रूप है ।

"नहीं मुझमें कोई फर्क नहीं है । उसने रुखाई से कहा ।

"क्या बात है ? आज तुम्हारा मुंह उतरा हुआ क्यों है ?"

"नहीं तो ? सिर में कुछ दर्द है । उसने अपनी दृष्टि उसके पांवों की ओर करके कहा आज सुदर्शन जी आए थे बच्चे के लिए ये जंजीर लाए थ इसमें एक हीरा भी जड़ा है ।

"अच्छा तुमने उसे चाय-नाश्ता पिलाई कि नहीं ? वह इन छोटी-छोटी बातों को बहुत गंभीरता से लेता है ।"

"चाय के साथ मिठाई भी थी ।"

"मेरी मूड ! और हां कल आएगा न ?"

"हां कह गया था कि नौ बजे आऊंगा।"

उमेश उदास होकर बोला "कल मुझे घर से आठ बजे ही जाना है। किन्तु, प्यारा सुदर्शन की खातिर-तवज्जा में कोई कोर-कसर बाकी न रहे। उसे पांच बजे शाम को आने के लिए फिर कह देना। मेरी ओर से माफी भी मांग लेना।"

वीणा घबराकर बोली "वाह आप भी खूब हैं। आपका दोस्त हजारों मीलों से चलकर आए और आप उसको घर पर ही न मिलें यह कहां की शराफत है! आपको कल रुकना ही पड़ेगा।"

"मैं नहीं रुक सकूंगा मुझे प्रोफेसर माथुर के यहां जाना है, एक जरूरी काम है। तुम नहीं जानतीं कि प्रोफेसर माथुर कितना सनकी है। वह कहता है—'मनुष्य का 'मूड' ही सर्वोपरि है। उसके मूड से जो खिलवाड़ करता है, उस पर मेरी वक्र-दृष्टि रहती है' कल वह मुझे लौजिक पर नोट्स लिखाएगा। मैं नहीं गया तो उसका मूड खराब रहे, वह परीक्षा में भी जीरो दे देगा। बड़ा सनकी है। बात को भूलता नहीं। उसे दैनिक पाठ की तरह याद करता है। मिस 'कांता' है न, उसकी क्लास में सदा चर्चा करता रहता है। उसके लिए बड़े पश्चात्ताप भरे स्वर में कहता है—'मैंने कांता को रात को ९ बजे बुलाया था। वह नहीं आई। मेरा मूड खराब हो गया। मूड के साथ मेरी सारी रात खराब हो गई। मैं सो नहीं सका। बड़ा बेचैन रहा। क्यों कांता तुम क्यों नहीं आईं?' वह बेचारी चुप! संकोच के कारण पानी-पानी। क्या उत्तर देती? मौन रही। पर प्रोफेसर साहब बोलते ही गए—'तुम इसलिए नहीं आईं कि रात का समय है भी क्या होगा। मैं प्रोफेसर और एकान्त! पर मैं उन थर्ड रेट प्रोफेसरों में नहीं हूं जो अपनी भोली-भाली छात्राओं पर प्रेम के डोरे डालकर शिक्षकों को बदनाम करते हैं। प्रेम सौंदर्य और वासना के प्रति मेरा 'मूड' कभी बनता ही नहीं।' और उसके बाद बीसों प्रोफेसर साहब बेचारी कांता को सदा शर्मिन्दा करते रहते हैं। और यदि कल मैं नहीं गया तो दूसरा नम्बर मेरा आ जाएगा। इसलिए मैं कल जाऊंगा ही।"

वीणा निरुत्तर रही। उसने मन ही मन कहा कि वह घबरा क्यों रही है? वह व्यग्र क्यों हो रही है?

दूसरे दिन सुदर्शन फिर आया।

आज वह अपने साथ तीन साड़ियाँ और कुछ ब्लाउज-पीसेज लाया था। वीणा के समक्ष रखते हुए बोला "भाइ भैया ने भेजे हैं। कहा है कि वीणा बहू को मेरी ओर से भेंट।

वीणा के मन में तुरन्त आया कि वह भी कह दे कि आप मेरे लिए क्या लाए हैं? इस कथन से सुदर्शन जरूर शर्मिन्दा होगा। पर वह ऐसा नहीं कह सकी। अपने को सम्भालकर बोली, "उन्हें मेरी ओर से धन्यवाद कहना।"

सुदर्शन उसके सामने जमकर बैठ गया। एक दीर्घ निश्वास ली और बोला 'भाभी तुम्हारी जैसी बीवी भाग्यशाली को ही मिलती है। बहुत ही अच्छा स्वभाव है आपका।"

वीणा शर्म से गड़ गई। हड़बड़ाकर बोली "आपके लिए चाय लाऊं।" और वह उठकर चली गई।

सुदर्शन खुली तबियत का व्यक्ति था। बहुत खुलकर बोलता था। निष्पाप भावना से प्रेरित वह,अपने मन की प्रत्येक बात को स्पष्टता से रख देता था। श्रोता की प्रतिक्रिया से वह निश्चित रहता था। विचार उसके मन में उठते थे और वह तुरन्त उन्हें बाहर निकाल देता था। एक-दो बार उसके मित्रों की पत्नियों ने उसकी कई बातों को बुरा भी मान लिया था। मोहन चौपड़ा से बातों ही बातों में दोस्ती टूट गई थी। फिर भी वह अपनी इस दुर्बलता को छोड़ने में लाचार था।

वीणा चाय बना कर ले आई। सुदर्शन ने उसके आते ही मन्दहास के साथ कहा "उमेश कहाँ है?

"वे तो कॉलेज गए हैं।"

"वाह बेटा मैं आऊं और वह चला जाए। यह मेरा बहुत बड़ा अपमान है।" उसने भौंहें टेढ़ी करके कहा।

'मैंने उन्हें आपके बारे में बता दिया था लेकिन उनके साथ भी मजबूरी थी। एक सनकी प्रोफेसर से पाला पड़ गया था। उन्होंने बताया कि उनको भी दुनिया सात लोकों से प्यारी है। 'मूड' ही उनका सर्वस्व है।"

"नहीं भाभी माँ का इकलौता बेटा ससुर की इकलौती बेटी का पति।

फिर पूछना ही क्या ? पंख न हों तो भी उड़ जाए ।" सुदर्शन तनिक गंभीर हो गया ।

"आप इन बातों को ज्यादा गंभीरता से न लीजिए । चीनी दो पसन्द या तीन ?"

"जितना आप प्रेम से डाल दें । अपन तो भाभी चीनी के नहीं प्रेम के भूखे हैं ।"

"हुंह !" बीना ने भृकुटियां तान लीं "क्या प्रेम-प्रेम लगा रखी है । प्रेम के चक्कर में जीवन खराब हो जाता है ।"

"नहीं भाभी प्रेम महान है । प्रेम के कारण ही मैना ने सुआ का रूप धारण किया, रोमियो ने सर्वस्व विसर्जन किया राम भक्त की भांति भटकता रहा, भगवान श्रीकृष्ण ने विदुर के घर साग-सब्जी खाई । और तुम कहती ।"

सुदर्शन ने बीना की ओर देखा । चुप हो गया । उसकी आंखों में हल्का रोष था ।

यह बात बदलकर उकता-सा बोला "तुम्हें प्रेम की बात अच्छी नहीं लगती है तो जाने दो ।" सुदर्शन चला गया । बीना बाद में बड़ी पछताई । उसने सोचा कि वास्तव में यह उसकी अभद्रता है । उसे संलाप में इतना गंभीर नहीं होना चाहिए था । फिर सुदर्शन सुदर्शन है । तब बीना को सुदर्शन द्वारा की गई अपनी प्रशंसाएं बड़ी ही प्रिय लगीं । उसकी छाती फूल गई । वह मुग्ध-सी बैठी सुदर्शन के बारे में सोचती रही । उसके बारे में सोचने में उसे अतीव आनंद आ रहा था । "प्राय नारियां एक अपरिचित से प्रशंसा के दो शब्द सुनकर गर्व का अनुभव करती हैं," ठीक वैसी ही पुलकन भरी प्रसन्नता बीना महसूस कर रही थी । उसने निश्चय किया कि रमेश के आते ही वह उसे सुदर्शन के यहां भेजेगी ।

समय बीतता जाता है । उसकी गति अबाध है । मृत्यु और जीवन सभी समय का इन्तजार करते हैं ।

बीना के मन में न चाहते हुए भी सुदर्शन ने घर कर लिया । वह पति को बाध्य करने लगी कि वह भैय्या के भोजन पर सुदर्शन को लेकर आए और जब

वह आ जाता तब वीणा खुशी में अतिरेक होकर सुदर्शन से हंसी-मजाक किया करती थी। कभी उनका मजाक धार्मिक मर्यादा से बाहर हो जाता था तब उमेश को वह चुभकर खलता था। लेकिन उमेश इसे दर्शाता नहीं था। उसके मन का सन्देह उसकी अंतड़ियों में ऐंठन उत्पन्न करता था पर वह इस दारुण दुख को सभ्यता के नाते गरल पान की तरह पी रहा था।

भैया भी को सुदर्शन अपने बेटे से भी प्यारा लगता था। लखपति का बेटा लाखों रुपए और कुछ नहीं। वीणा के साथ घूमने-मिलने में उसने कोई अवरोध नहीं किया।

और एक दिन सुदर्शन सारी मोह-माया छोड़कर पुन: कलकत्ता चला गया।

वीणा की आंखें भर आई। एक बार उसने चाहा कि वह सुदर्शन की बांहों में लिपट कर रो पड़े पर वह विवाहिता थी। यह कार्य कुछ अधिक अमर्यादित हो जाता है। अत: वह भीतर ही भीतर तड़प कर रह गई।

और सुदर्शन ने जाते-जाते इतना ही कहा "अब की बार यहां के दिन हंसी खुशी में बीत गए। भाभी के आ जाने से हृदय की शुष्कता मिट गई।"

उमेश ने इन शब्दों के क्या अर्थ लगाए, नहीं जाने लेकिन उसका चेहरा स्याह हो गया क्योंकि सुदर्शन की पैनी दृष्टि तत्काल उस पर जम गई थी।

संघर्ष चलता ही गया

सटोरिया का अनुभव है कि सट्टा शाही लकड़हारा का नसीब है, जो रात को भूखे-नंगे को दिन में कोठियों का स्वामी बना दे। और तीसरे दिन पुनः 'एक दिन का सुल्तान' की भांति भिश्ती का भिश्ती बना दे।

वीणा के साथ गोविन्दप्रसाद का भाग्य-तारा भोर की तारों के साथ लुप्त होने लगा। हर रोज पासा उल्टा पड़ने लगा। हालत बिगड़ती गई।

गंगोत्री को इस बात की बड़ी चिंता हुई। दुधारू गाय के टखने पर एक गूमर को जो दुःख होता है वही दुःख गंगोत्री को होने लगा। और एक दिन उसने वीणा को बुलाकर कहा, "बहू अब तुम्हें होशियारी रखनी है मेरे मरने पर चमेली तो तुम्हारा वंश ही सुधर जाएगा।"

"कहिए।" उसने धीमे से कहा।

"यह आज शाम को बताऊंगी। कहकर सास ने उसे एक सोने का कंठहार दिया। यह पहला मौका था जब गंगोत्री ने अपनी मर्जी से इतना कीमती जेवर बनाकर वीणा को दिया हो।

वीणा मुदित थी। लेकिन ?

रमेश ने रात को लेटे हुए वीणा से पूछा "तुम अपने इस 'लेकिन' की टांग तोड़ोगी कि नहीं? तुम मुझे नाहक परेशान कर देती हो। क्या सुदर्शन ने कुछ सिखा दिया है?

"नहीं तो।

"अरे वह तो पक्का मुंहचोर है। मुंह के सामने मीत और बाद में तीन पैसे का कोई ठक नहीं।"

वीणा का मुख मलीन हो गया। वास्तव में सुदर्शन मुंहचोर निकला। कलकत्ता जाने के बाद एक चिट्ठी भी नहीं लिखी। कहता था कि भाभी जी मेरा मन आपके बिना कैसे लगेगा?

सचमुच पुरुष पत्थर के होते हैं। अर्चना का अभिप्राय ही नहीं समझते।

"तुम उदास क्यों हो गई?" रमेश ने हठात् पूछा। वीणा सकपका गई।

"फिर ?" वीणा इतना कहकर चुप हो गई।

"बोलती क्यों नहीं ? सुदर्शन के जाने के बाद तुम खोई-खोई-सी रहती हो। क्या उसकी याद ... ?" उसके स्वर में व्यंग था।

वीणा इस बार झिझककर झूठ बोली "मैं उसे क्यों याद करने बैठूं मेरा तो देवर है वह भी रिश्ते के बाहर का। मैं इसलिए परेशान हूं कि फिर से माँ ...!"

उमेश की आँखें विस्फारित हो गईं। विस्मय-विमूढ़ होता हुआ बोला, "यह क्या कहती हो अभी तो पांच महीने भी नहीं बीते।"

"मैं क्या जानूं ?" वह शर्मा गई।

... गनाथा गहरी आत्मीयता से बोली, "जुए में दाव उल्टा पड़ने लगता है तब वह जुआरी को कंगाल करके छोड़ता है। तुम्हारे पिताजी दिन-दिन 'खाली' होते जा रहे हैं। जाकर जितना मिले धीरे धीरे यहां ले आ।"

वीणा को अपने पिता के प्रति अपनी सास का यह अशुभ विचार बहुत तीखा खटक गया। भवें तरेर कर बोली "ऐसा आपको नहीं सोचना चाहिए। घाटा-मुनाफा व्यापार में होता ही है।"

"समझती क्यों नहीं ?" सास ने अपने शब्दों पर जोर दिया।

"मैं ऐसा नहीं कर सकती यह नीच काम है। मैं अपने बाप के यहां से एक पाई भी नहीं लाऊंगी।"

बहू से टका-सा उत्तर पाकर गंगोजी तिलमिला उठी। फुफकार कर वह तनकर बैठ गई जैसे अब वह वीणा को आड़े हाथों लेगी। लेकिन वह जाने क्या सोचकर पुनः कोमल हो गई पर हृदयों में फर्क पड़ ही गया। वह फर्क ममोजी की वाणी में विष बनकर फूटा। वह उमेश को भरने लगी। और उमेश अपनी बुद्धि को ताक में रखकर वीणा से रुष्ट रहने लगा। वीणा को उसके रूखे व्यवहार से ऐसा लगता था कि उमेश की नाराजगी के पीछे केवल माँ का बरगलाना नहीं एक दबी घृणा है घृणा! तब वीणा को सुदर्शन याद हो उठता था। वह कितने प्यार से बोलता था कितने प्यार से उसके हर कार्य की तारीफ करता था वह उसके रूप गुण और सौजन्य का बखान कई क्षण बोलता रहता था। वह उस जैसी पत्नी भी

पाना चाहता था।

जब वह अतीत की स्मृति में अपने को उन्मुक्त करके पुन छूटा करता था।
तब उसे सुषमा की अनुपस्थिति बहुत अखरती थी।

वीणा ने दूसरे बच्चे को जन्म दिया। भाग्य से वह भी लड़का हुआ लेकिन इस बार उतनी खुशियाँ नहीं मनाई गई जितनी पहले बच्चे पर मनाई गई थी। गोविन्दप्रसाद की हालत बहुत खराब होने लगी। इस बार उन्होंने अपने दोहिते को हार नहीं पहनाया जिसे लेकर अमाजी कई दिन तक बकबक करती रही।

इसी वर्ष उमेश का फाइनल था।

वह अध्ययन में अपनी समस्त शक्ति लगा देना चाहता था पर गृह-कलह के मारे वह शांत नहीं हो पा रहा था। सास और बहू कोई न कोई बखेड़ा करके उसके मन को अशांत कर दिया करती थी जिससे उसके अन्तस् की पलायन-प्रवृत्ति बढ़ती गई।

लेकिन वीणा ने अपनी सास के समक्ष हथियार नहीं डाले। गृह-दाह के संतप्त वातावरण में रहकर भी उसने स्वीकार नहीं किया कि वह बहाने बनाकर या चोरी करके अपने पिता की शेष संपत्ति उठा लाएगी।

उस दिन उमेश ने माँ का बड़बड़ाना रात को काफी देर तक सुना। वह अपने अध्ययन में तल्लीन था। झल्ला पड़ा "माँ तू चुप नहीं रहती ? आखिर यह हमेशा की कांय-कांय क्यों हो रही है ? यह अपने बाप का धन क्यों लाएगी ? यह विवाह के समय एग्रीमेंट नहीं हुआ था। तुम खामखा बेचारी को परेशान करती रहती हो।"

उमेश का इतना कहना था कि गनोरी भड़क उठी। कड़क कर बोली "जाओ किसी और को सिखा अभी तो मैं अपने खसम की कमाई खाती हूँ।"

उमेश ने शांत स्वर में कहा 'आखिर तुम ऐसा दबाव क्यों डालती हो ? भग-वान का दिया तुम्हारे पास सब कुछ तो है माँ फिर यह बेकार की तृष्णा क्यों ?"

"मुझे उपदेश देने की कोई जरूरत नहीं है।" गनोरी सास आँखें करके

बोली उपदेश अपनी इस बबुआ को दे जैसे भीतर ही भीतर तुमको मर रही है ? और यह छोकरा भी इसकी 'हाँ' में 'हाँ' मिलाने लगा जैसे मैं अपने भले की बात कह रही हूँ । मुझे क्या जरूरत है धन की लेकिन मैं तो तुम्हारे सुख की सोचती हूँ । और तू ? गंगोत्री चीख पड़ी "रात को सुख देनेवाली के सामने पेट में जो आग रखने वालों को भूल गया ।" गंगोत्री रो पड़ी ।

उमेश पुस्तक रखकर गरज पड़ा "भाड़ में जाए यह घर और पढ़ाई । मैं चला । मैं इस नरक में नहीं रह सकता । रात झगड़ा दिन झगड़ा जैसे यह घर न होकर महाभारत का मैदान है । तुम अपनी बात पर अड़ी हो और वह अपनी बात पर ।"

उमेश बाहर जाने लगा ।

वीणा उसके आगे आकर खड़ी हो गई, "रुक जाइए न यह बच्चों-सी बुद्धि अच्छी नहीं रहती ।"

'जाड़ है ।' उमेश चला गया ।

वीणा ने चाह कर भी उसे नहीं रोका । वह जाता है तो जाए, कोई बच्चा तो नहीं जो उसे समझाए-बुझाए ।

उमेश तीन दिन तक घर नहीं लौटा । ,।।।) ॥।॥ ॥।

वीणा चिन्तित हो उठी । पति पर स्व समर्पण करने वाली नारी के लिए पति की अनुपस्थिति ज्वलित अंगार-सी पीड़ा देने लगी । गंगोत्री ने उससे सर्वथा बोलना बन्द कर दिया था ।

आखिर वीणा अपने आपको नहीं रोक सकी । सजल नेत्र लेकर वह गंगोत्री के पास गई "माँ जी तीन दिन" ।"

गंगोत्री बीच में ही उबल पड़ी "तीन दिन क्यों तीन जुग तक यदि वह न आए तो मैं उसकी परवाह नहीं करूंगी ।"

वीणा कलेजे पर पत्थर रख कर लौट पड़ी । उसे सुनाने के ख्याल से गंगोत्री जोर से बोली "मैं आज की गाड़ी से रामपुर जा रही हूँ—अपनी बहिन के पास फिर खूब मेरे बेटे को पाठ पढ़ाना ।

वीणा खामोश रही ।

रात की गाड़ी पर गंगोत्री सचमुच चली गई । वीणा को विश्वास नहीं था ।

मनौती सदा ऐसी धमकियाँ दिया करती थी। इन गीदड़ धमकियों से बीना भली भाँति परिचित थी लेकिन आज वे गीदड़ धमकियाँ सत्य हो गईं।

बीना सिसक-सिसककर रो रही थी।

उसके दोनों बच्चे बिनाओं से मुक्त निर्जीव सुमनों की भाँति सो रहे थे।

और बीना जब अपनी सास के चरण-स्पर्श करने के लिए बढ़ी तब घन लोलुप सास विषाक्त स्वर में बोली "बहू! तूने मेरा पुत्र मुझसे छीन लिया भगवान तुझसे तेरे पुत्रों को छीन ले। ऐसा मर्मान्तक शाप बीना काँप उठी।

रात भर उसे लगता रहा कि कोई अदृश्य शक्ति उसे अपने दोनों पुत्रों से विलग कर रही है। वह सो नहीं सकी।

तीसरे दिन भयंकर दुर्घटना घट गई।

गोविन्द प्रसाद का अप्रत्याशित देहान्त हो गया। सारे शहर में यह समाचार हवा की तरह फैल गया। लेनदार उसकी लाश को कुर्क करने के लिए पहुँच गए।

कैसा घृणित दृश्य था! अन्तहीन घृणा की तरह यह बीना का युगों-युगों तक स्मरण रहेगा और उसके हृदय में मृदुलता की जगह एक स्थायी घृणा को जन्म देगा।

उसके बाप की मृत देह पड़ी थी। वह विषाद के मारे निढाल हुई करुण-क्रन्दन कर रही थी। एक पड़ोसिन उसे थाम के रही थी। सब सगे-सम्बन्धियों के नाते-रिश्ते उनके बाप की सम्पत्ति के साथ समाप्त ही गए थे। जैसे पैसा है तो प्यार है जैसे सम्पत्ति है तो सम्बन्ध है। आदमी यन्त्र हो रहा है। वह अपने आपको युग के हाथ बेच रहा है। कितनी बड़ी विडम्बना है।

तभी सेठ रतनलाल ने बीना को संभाला। बीना को लगा कि इन पाषाण वत् इन्सानों के बीच एक तो करुणामय निकला। वह उसे बाबा कहकर लिपट पड़ी। रतनलाल उसे एक ओर ले गया। स्नेहसिक्त स्वर में बोला "रानी क्यों है बेटी धैर्य रख जो होना था वह हो ही गया भगवान की यही मर्जी थी चुप रह, बेटी चुप रह।"

बिलखती बीना ने चैन का एक साँस लिया।

उसने एक बार करुणा से रतनलाल की ओर देखा।

रतनलाल धीरे से बोला "देखो बेटी गोविन्द में मेरे दस हजार रुपए थे पू
दस हजार ।"

उसका इतना कहना था कि वह वह भड़क उठी। उसे लगा कि मनुष्य अपन
समस्त मानवीय भावनाओं से परे अर्थ के यांत्रिक आवर्तन में आवेष्टित हो ए
है। वह चीखकर फफक पड़ी।

उमेश आ गया था।

वह अपराधी की भांति एक ओर खड़ा था। बीना को उसके आगमन
सांत्वना हुई। सेठ गोविन्दप्रसाद की अर्थी बड़ी धूमधाम से निकली।

उसके पीछे बड़ा भोज भी किया गया पर तेरहवीं के बाद बीना ने जाना क
उनके मान की एक-एक ईंट बिक चुकी है।

गंगोत्री चली गई थी। दो बच्चे और खर्च।

उमेश परेशान हो उठा।

क्या करे? फिर उसका अपनी भी आवश्यकतायें! वह विचलित हो गया
परीक्षा से अधिक उसे निरन्तर बच्चे होने की चिन्ता होने लगी। और एक दि
उसने बीना से कहा "मैं कालेज के छात्रों के साथ तीन रोज के लिए बाहर
रहा हूं।"

"क्यों? कहां जाना है?"

"कदाचित् कोई कैंप लगेगा। तुम चिन्ता न करो मैं शीघ्र ही आ जाऊंगा।"

"कुछ रुपए चाहिए। बीना ने नख कुरेदकर धीमे से पूछा "मेरे समाप्त
गए हैं। उस पिछला चुकता करके नया मंगवाना है।"

"मां को लिखा था उसका क्या जवाब आया?"

"जो मैंने कहा था। बीना का स्वर निम्न हो गया आपको रक्त
गौरव पर बड़ा दम्भ है। परन्तु मुझे इस पर तनिक भी यकीन नहीं। यह रक्त
गौरव रक्त-सम्बन्ध रक्त-भव सब मिथ्या है। मां ममता के पीछे दीवानी है अपन
ममत्व मां के लिए सर्वस्व विसर्जन कर सकता है, निरी बकवास है। हम उनक

सबसे मजबूत रिश्ता है—स्वार्थ। जब तक स्वार्थ की मेखला अटूट है संसार की हर निधि हमसे लिपटी रहेगी।" वीणा के निरन्तर दो प्रवचन के पश्चात् हुए पाण्डुर मुख पर एक भाव झलक पड़ा। उमेश शांत-निश्चल रहा।

वीणा दूसरी ओर मुंह घुमाकर बोली "मां ने लिखा है कि मैं तुम लोगों के लिए मरी समान हूं। मुझे तुम लोगों की जितनी सेवा करनी थी वह कर दी। आप इन पंक्तियों के मर्म को नहीं जानते ? इसका स्पष्ट अभिप्राय यही है कि अब आप दोनों भी मेरे लिए मरे समान हैं। तभी तो मैं कहती हूं कि ये सम्बन्ध अपनत्व ममत्व सब झूठ है।"

उमेश कुछ नहीं बोला। उसके नेत्र छलछला आए।

वह जाता हुआ बोला "तुम किसी भी तरह अपना प्रबन्ध कर लेना। फिर अपने गह ? परीक्षा को बीच में छोड़ देना भविष्य के लिए अत्यन्त घातक सिद्ध होगा।

उमेश चला गया। वीणा अकेली रह गई।

सांझ का मटमैला वातावरण छा रहा था। प्रतीची प्रांगण में अरुणिमा की दहकती आभा फूट रही थी। उसमें एक नावनुमा मेघ-खंड ऐसा लग रहा था जैसे ई नाव किसी भयानक आग में जल रही हो।

वीणा का बड़ा लड़का मुन्नू रो पड़ा था। उसको दूध पिलाने का समय हो ा था। वीणा ने उसे दूध पिलाने के लिए स्टोव पर पानी चढ़ा दिया। डाक्टर कथनानुसार उसे विलायती दूध पिलाया जाता था।

बर्तन मांजनेवाली 'स्वामिनी' आ गई थी।

और वीणा विचारों में खोई-सी बैठी रही। अचानक वह उठी। फाउन्टेन पेन ाकर सुदर्शन को पत्र लिखने बैठी। क्षण भर के लिए उसे यह कार्य अनपेक्षित ा लगा। विवाहिता को अन्य पुरुष को पत्र लिखने का कोई अधिकार नहीं है। फर ऐसे पुरुष को जो उस जैसी बीवी चाहता है।

मन के संघर्षमय आन्दोलन को रोककर वह लिखने बैठ गई, "सुदर्शन जी उनकी माता जी हमसे लड़कर रायपुर चली गई हैं। पिता जी की मृत्यु के उपरान्त मुझे अपना कहनेवाला कोई नहीं है क्या आप चंद दिनों के लिए यहां नहीं आ

सकता।" उसने स्वामिनी को खत पोस्ट करने लिए दे दिया। देते समय उसके मन में सहसा यह विचार आया कि यह अनुचित नहीं है। युद्ध में अपनों को ही मार दिया जाता है फिर सुदर्शन चक्र का अनुज है। चक्र देवतुल्य चक्र।

उमेश की तबीयत इधर खराब थी। कोई फोड़ा हो गया था। सुदर्शन बीना का पत्र पाकर आ गया था। पहले दिन ही सुदर्शन चक्र के साथ उमेश के घर आया।

उमेश बिस्तरे पर सोया-सोया कोई पुस्तक पढ़ रहा था। बीना दोनों बच्चों को दूध पिलाकर उमेश के समीप बैठी-बैठी स्वेटर बुन रही थी।

खिड़की की राह केवल निर्झर-सा सुरक्षित अभिनव आलोक बिखर रहा था। उस आलोक में अनंत उल्लास अन्तर्हित था।

चक्र ने दूर को सम्बोधित करके कहा "प्राकृति का प्रकाश बहुत पवित्र होता है बीनू, मुझ को सुख इनसे मिलता है वह इन कृत्रिम उपादानों से नहीं। भई, मैंने तो सुदर्शन को कह दिया है कि मेरे लिए तो एक अलग झोंपड़ी बनवा दे जहाँ दीया जले।

बीना को उपहास सूझा। वह मुस्कराकर बोली "चक्र भैया अब साधू ही बनने जा रहे हैं फिर दीए की क्या जरूरत? अन्धेरे में ही प्रकाश ढूंढिए।"

अपनी भूल को स्वीकार करता हुआ चक्र बोला "विचार तुम्हारा अच्छा है। सचमुच मनुष्य को अन्धकार में ही प्रकाश के दर्शन करने चाहिएं। पर मैं अभी तक साधक हूँ सिद्ध नहीं। मेरा मतलब तुम समझ गई होंगी कि अभी तक मैं गृहस्थ ही हूँ। देखो उमेश की बीमारी का समाचार सुनकर मेरी करुणा बहुत पीड़ा पाने लगी। आना ही पड़ा। क्यों भैया उमेश क्या हाल है तुम्हारे इस फोड़े का। मुझे तो सबसे पहले तुम्हारे इस फोड़े के बारे में ही पूछना चाहिए था।"

उमेश स्मित वदन बोला "ठीक है दो-चार दिन में अच्छा हो जाऊंगा। चलने-फिरने लगूंगा। क्यों सुदर्शन तुम्हारा आना कैसे हुआ?'

सुदर्शन चौंक पड़ा। बीना की दृष्टि उस पर जम गई। सुदर्शन उसके वाणु मर्म को समझ गया। दृष्टि को भटकाता हुआ बोला "भैया की याद हो आई,

फिर कलकत्ता गए बहुत दिन हो गए थे। मुझे अपनी मिट्टी की याद बहुत आती है। बात यह है उमेश मनुष्य को आत्मीयों में रहने में जो आनंद प्राप्त होता है वैसा आनन्द उसे कहीं भी नहीं मिलता।"

चक्र ने सुदर्शन की बात को काट दिया "यह भी तुम्हारी संकीर्णता है। मनुष्य को प्रत्येक के अनुकूल बनना चाहिए। यह अनुकूलता अपनत्व की आत्मा है। उस सौहार्द की चरमसीमा है जो मनुष्य को एक दूसरे के साथ तादात्म्य करती है।

सुदर्शन कुछ क्षण चुप रहा। उसने एक जिज्ञासु की भांति पूछा "यह कैसे संभव हो सकता है भैया उदाहरण के लिए मेरी गहरी मित्रता वीणा भाभी से चंद ही दिनों में क्यों हो गई जब कि मैं इसके पूर्व कई भाभियों से मिल चुका हूं साथ-साथ रह भी चुका हू ?"

चक्र ने विहंस कर उत्तर दिया "तुमने अपनी अनुकूलता के भाव वीणा में शीघ्रता से पा लिए और वीणा ने भी तुम्हें अपने अनुकूल पाया। यदि वीणा तुम्हारी बातचीत को प्रोत्साहन नहीं देती तो क्या तुम उससे घुलना-मिलना उचित समझते ? "नहीं कदापि नहीं। इसलिए मैं हर एक का मित्र बन सकता हूं। मैं हरएक के अनुकूल बनने का प्रयास करता हूं मित्र बढ़ाता हूं। करुणा रखता हूं।"

चक्र विह्वल हो गया।

क्षण भर के लिए गहरा सन्नाटा छा गया।

छोटे लड़के गुड्डू ने रोना प्रारंभ कर दिया।

वीणा उठकर उस ओर चली गई।

जीवन दुर्घटना का केन्द्र है। सौभाग्य-दुर्भाग्य के थपेड़े प्राण में सांस की तरह जीवन के साथ जुड़े हुए हैं। मनुष्य की आशा से विपरीत यहां क्षण-क्षण विद्रोह करता रहता है।

पता न जाने क्यों उमेश वीणा पर आगबबूला हो गया। अबोध बालक की तरह उसके रोष के कारण का वह पता लगाने लगी। उसने अपने आपको देखा-भाला। वह तुरन्त समझ गई। उमेश के बिगड़ने का कारण केवल सुदर्शन है।

पड़ी। उसने अपना मुख घुटनों में छुपा लिया। सुदर्शन कुछ देर तक उसे देखता रह
वह क्या कहे उसकी समझ में नहीं आ रहा था।

वीणा आंसू पोंछती हुई रुद्ध कंठ से बोली "सास चली तो चली पर आश्चर्य करेंगे कि एक नकद पैसा भी नहीं छोड़ गई। यदि मेरे पास अपने पी की सम्पत्ति नहीं होती तो गुजारा करना कठिन हो जाता।"

"मौसी ऐसी दिखती तो नहीं थी। और कौन किसके मन में छुपकर बैठा भगवान जाने।" सुदर्शन कुछ क्षण तक वीणा के चेहरे के भाव पढ़ता रहा। पांवों पर दृष्टि टिकाकर वह बोला "चाचा जी ठीक कहते थे कि ये नाते-रि सिर्फ मन को सांत्वना देने के साधन हैं। वास्तव में कोई किसी का नहीं है।"

इसके बाद सुदर्शन कुछ देर तक चुपचाप बैठा रहा। फिर वह बिना कुछ ही चला गया। आज वीणा ने भी उसे कुछ नहीं कहा। वह भी निश्चल-सी रही।

रात को उमेश लगभग बारह बजे लौटा।

वीणा हिन्दी का उपन्यास पढ़ रही थी।

उमेश ने कपड़े बदलकर पूछा "सोई नहीं ?

"आपका इन्तजार कर रही हूं।"

"क्यों ?"

"भोजन नहीं करेंगे ?"

"भूख तो नहीं फिर भी तुम बुरा मान जाओगी लाओ एक रोटी खा हूं।"

सदा की भांति इस समय उमेश का अन्तस् प्यार से भर जाता था। उ मन की मैल-अनुपमा सब पावन सरिता की धारा की भांति निर्मल और प्रेमम हो जाती थी। वह वीणा से हंस-हंस कर बोलता था। इधर उधर की चर्चाएं कि करता था और वीणा का मन अंतिम तार की भांति झनझना कर यही पाय करता था—"आदमी बहुत कमजोर है, आदमी बहुत कमजोर है।

धीरे-धीरे एक अव्यक्त सन्देह सुदर्शन और वीणा को लेकर उमेश के मन

घर करता गया। वह खिन्न रहने लगा। उसके स्वभाव में रुखाई के अलावा कुछ चिड़चिड़ापन आ गया। वीणा को वह अब उतना अच्छी नहीं लगी और उमेश धर्मशाला के यात्री की भांति अपने को समझने लगा। आता था जाता था और वापस चला जाता था। रात को वह कभी-कभी आता भी नहीं था। बहाना था—पढ़ाई चल रही है।

नया बच्चा गुड्डू ढाई महीने का हो गया था। उमेश को बच्चा हुए अभी लगभग चार-पांच सप्ताह ही हुए थे कि वीणा को महसूस हुआ कि फिर खतरा हो गया है पर लज्जा के मारे वह कुछ नहीं बोली। और दो महीने फिर बीत गए।

जच्चा के लिए शहर से दूर एक अलग छोटा-सा बंगलानुमा मकान तैयार हो गया था। सुदर्शन वापस जाने की तैयारियां करने लगा। न जाने क्यों सुदर्शन के पुनर्गमन से वीणा उदासी महसूसी करने लगी। अब वीणा सुदर्शन को अपने पास अधिक से अधिक देखना चाहती थी। वह क्यों देखना चाहती थी इसका उत्तर नहीं दिया जा सकता। यह अनुभूति की बात है। अभाव की तृष्णा पूर्णरूपेण मनुष्य के चारों ओर लिपटी रहती है। वीणा को लगता था कि उमेश अपनी माता जी को लेकर उससे असन्तुष्ट है रुष्ट है। यह विचार कर कभी-कभी वह अत्यन्त अधीर हो उठती थी। क्या मर्द के लिए मां ही सर्वस्व है पत्नी कुछ नहीं? वह ऐसा भी सोचा करती थी।

उस दिन वह एकान्त में बैठी-बैठी अपने दुर्भाग्य पर रो बैठी। यह दुस्सह दुख अब वह सहन नहीं कर सकती। उसका पति उसे जरा भी आत्मीयता न दे। दिन प्रतिदिन उससे दूर हटता जाए, यह सब कैसे एक नारी सहन कर सकती है? व्यथा की भी एक सीमा होती है।

रात के अंधियारे की तरह एक सांझ वीणा अवसाद से घिरी हुई थी। मुन्नू पड़ोसिन के यहां था। गुड्डू सोया हुआ था। कमरे में अंधेरा था। अंधेरे में कभी कभी वीणा की सिसकियां सुनाई पड़ जाती थीं। धीरे धीरे सिसकियां कम हो गईं। वह बिस्तरे पर लेट गई।

तभी सुदर्शन ने घर में प्रवेश किया।

पुकारा—"भाभी!

वीणा की इच्छा उत्तर देने को नहीं हुई। उसने बिस्तर पर करवट बदल ली।

"भाभी भाभी जी आह कहाँ चली गईं? घर खुला और खुद गायब। कहीं पीछे से कोई चोर घुस गया तो? मुझे उनकी बला से माल जाएगा तो हमारे उनका क्या। भाभी!' उसने जोर से पुकारा।

"मैं यहां हूं सोने के कमरे में।"

सुदर्शन उस कमरे की ओर गया। अंधेरा था फिर भी उसने बड़ी आसानी से पता ली क्योंकि वह उस कमरे से परिचित था।

"क्या बात है?" सुदर्शन ने पूछा।

"तबियत ठीक नहीं है।"

"क्यों?

"सुदर्शन तुम तो जग के छोटे भाई हो, क्या बता सकते हो कि नारी के भाग्य में केवल रोग के अलावा दुख और भी लिखा है? पल-पल की उपेक्षा प्रतारणा और मौन-सांकेतिक दुत्कारें। लगता है कि ब्रह्माण्ड के शाश्वत अंधकार की भांति नारी का भाग्य है। जन्म के प्रथम क्रन्दन के साथ उपेक्षा दुर्भाग्य और दया की पात्रा बनकर जिस जीवन का प्रारम्भ होता है, उसका अंत कितना करुणामय होगा यह पुरुष नहीं जान सकते। उज्ज्वल स्निग्धता के कण भी उसके लिए मर्मान्तक व्यथा देनेवाले कंकरीले पत्थर हैं जिन पर सहजता से चला नहीं जाता। एक महाश्मशान की भांति घोर अकेलापन ही उसके हृदय का सच्चा साथी और उसके उन अश्रुओं का साक्षी है जो उसने मुक्त हास्य के साथ सदा-सदा दूसरों के सुख व संतोष के लिए छिपा लिए हों।"

सुदर्शन उसके मुख पर चल रहे संघर्ष की रेखाओं को देखता रहा। अश्रु-रंजित उसका पांडुर मुख आन्तरिक व्यथा से और पीला हो गया।

'बात क्या है?"

'आप अपने मित्र को समझा नहीं सकते? वह मुझे क्यों इतना सताते हैं? इससे तो उन्हें मुझे विष देकर मार देना चाहिए।"

सुदर्शन हतप्रभ हो गया। अपनी पैनी दृष्टि से वीणा के अंतर के भावों को पढ़ता हुआ बोला "क्यों क्या कोई विशेष बात हो गई है? मुझे चार घंटे पहले

मेरा रेस्तां में मिला था। मैंने उस समय भी कहा था कि भाभी जी की तबियत ठीक नहीं है।"

"और उन्होंने क्या उत्तर दिया?" बीणा ने हठात् पूछा।

"वह चुप रहा। मैं समझ गया कि उसकी चुप्पी का कोई विशेष कारण हो सकता है। तभी तो आया हूं।"

"तीन रोज से बोल नहीं रहे हैं। घर पर भोजन नहीं कर रहे हैं। कारण पूछती हूं तो कह देते हैं कि यूं ही। इस 'यूं ही' का रहस्य में समझने में सर्वथा असमर्थ हूं।"

"इधर कई रोज से मुझसे भी ठीक से बात नहीं करता। बहुत खोया-खोया उद्विग्न रहता है।"

"मां और बहू के झगड़े में वे अपने आपको संतुलित नहीं कर पा रहे हैं।"

"फिर?"

"'फिर' का मेरे पास कोई उत्तर नहीं है। मैंने कोई अपराध नहीं किया। इस पर भी मैंने बीस बार सास को लिख दिए हैं। उन्हें यह भी लिख दिया कि मैं अपनी वैयक्तिक सम्पत्ति भी आपको दे चुकी पर वह मेरे पत्र का उत्तर देना भी उचित नहीं समझतीं। उनके मन में यह घर कर गया है कि मैंने उनसे उनका बेटा छीन लिया है।"

"पर उमेश तो समझदार है?"

"बेटा मां के पीछे उस पर भी अत्याचार करने लगता है जिसने अपने जीवन का सारा माधुर्य अमृत समर्पण उसके चरणों में श्रद्धा-भक्ति के साथ अर्पित कर दिया है। जिसने अपने अंग-अंग की एक-एक पखुड़ी में उसके रक्त का मिश्रण कर लिया है, उस स्त्री के प्रति पुरुष इतना कठोर होकर अपने को अधम बना रहा है। कैसे कोई स्त्री इतनी यातनाओं के समक्ष इतना निर्दयी विद्रूप सहन कर अपने आपको पवित्र अग्नि के धार्मिक धूमाच्छन्न वातावरण में मंत्रों को साक्षी बनाकर एक अपरिचित पुरुष को अपना देवता अपना धिवम् अपना आराध्य मानेगी? यह क्या अत्याचार नहीं?"

"है।"

वह विह्वल हो उठी। उसने लपककर सुदर्शन का हाथ पकड़ लिया "तुम्हीं बताओ मैं क्या करूं? वह घर अब मुझे काटने को दौड़ता है। और तो और, उनके रूखे व्यवहार और भयानक दृष्टि से मुझे भय लगने लगा। मैं हरदम एक दुश्चिन्ता में घिरी रहती हूं कि कहीं वह मां का सारा ममत्व की अग्नि में बहकर मुझे जान से न मार दें।"

"अरे! अरे! तुम यह कैसा पागलपन कर रही हो? उमेश तुम्हें मारेगा, छि: छि: तुम्हें ऐसा सोचना भी नहीं चाहिए। गृह-कलह से कभी-कभी आदमी आवश्यकता से अधिक परेशान अवश्य हो सकता है, पर इतना भयंकर नहीं बन सकता। आखिर वह तुम्हारा पति है।

"पति भाई और बाप के रिश्ते को मैं नहीं मानती!" वह कांपकर बोली।

सुदर्शन यह सुनकर अकबक हो गया। उसने तीक्ष्ण दृष्टि से वीणा को देखा जैसे उसमें कोई महान् परिवर्तन आ गया हो। जैसे आज वीणा वह वीणा नहीं जो कुछ दिन पहले थी।

"तुम मुझे ऐसे घूर क्यों रहे हो?"

"मैं? लगता है कि तुम कुछ बदल गई हो। उमेश के बारे में ।"

"कटु सत्य अप्रिय होता है। डैसडेमोना—'ऑथेलो' की नायिका का दुखांत में पढ़कर सिहर गई थी। आज से पांच रोज पहले उमेश निष्प्रयोजन ही बड़े चाकू को देख रहा था। उसकी भंगिमा वैसी ही थी जैसी कि खून करनेवाले इन्सान की होती है। दृष्टि में भयंकर स्थिरता तन में विवशता और तनी हुई भौंहें उसके भयानक इरादे की प्रतीक थीं। और बात भी कोई विशेष नहीं थी। मैंने केवल इतना ही कहा कि मैं फिर मां बन रही हूं।"

" 'तुम फिर मां बन रही हो कैसे? उमेश ने चिहुंककर पूछा।"

"मैं गुस्से में भर उठी। दिल में आया कि साफ-साफ कह दूं। पर कहना उचित न समझकर चुप हो गई। इसके बाद मैंने देखा कि उसमें घोर परिवर्तन आ रहा है। उसकी आकृति सुरम्या के पिता की भांति विकृत हो गई जिन्होंने भ्रमवश अपनी पुत्री को दुश्चरित्र समझ लिया था। मुझे उसका यह व्यवहार बड़ा ही अखर लगा। अब तो तुम कहो पर नारी भारतीय नारी कितनी ही विद्रोहिणी क्यों

न हो पर उसके विशाल हृदय के किसी कोने में दुर्बलता छिपी ही रहती है। वह विनाश का इरादा लेकर बढ़ी हाती है और विरोधी को ठेस पहुंचाते-पहुंचाते वह निर्बल बन जाती है। यही कमजोरी मुझमें है। लेकिन मैं तुम्हें सच कह रही हूं कि मैं यह सब जुल्म सह नहीं सकती। मुझे यह सब रुचिकर नहीं लगता। मैं चक्र भैया की तरह किसी के अनुकूल नहीं बन सकती। उसके अनुकूल बनने में मुझे समस्त तृष्णाओं से विमुख होना पड़ता है। तृष्णाहीन जीवन को मैं जीवन नहीं मानती। इससे तो मैं मृत्यु को ठीक समझती हूं। सच पूछो तो मैं तुम्हें एक बात कहना चाहती कि वासना रहित जीवन जीवन्त मृत्यु है। एक चलती-फिरती लाश है।"

"भाभी, तुम कितनी रहस्यमयी हो। मैं समझता था कि तुम वैसी ही गुड़िया हो जो हमारे समाज में पैदा होती है और जीवन भर परिवार वालों की सेवा करती-करती मोक्ष को प्राप्त हो जाती है।"

"चक्र भैया की संगत का प्रभाव तुम पर भी पड़ने लगा है।" बीना साभिप्राय मुस्कराकर बोली 'मोक्ष निर्वाण और कल्याण य सब पलायनवादियों के पर्याय वाची शब्द है—मनुष्य को भ्रम में डालना उनके सत्व को उन्हीं के द्वारा हनन करवाना। मझ पर ये शब्द प्रभाव नहीं डाल सकते। मैं जीवन का सुख वैभव और संतोष चाहती हू। लेकिन उमेश मे सब जो मुझसे छीन रहा है। मैं ।"

उसकी आंखें छलछला आईं। कंठ अवरुद्ध हो गया।

सुदर्शन उन्मन हो उठा, खड़े होकर उसने एक अंगड़ाई ली। अंगड़ाई के साथ जंभाई। तब बोला तुम उमेश से साफ-साफ क्यों नहीं कह देतीं आखिर वह चाहता क्या है? उसके मन में क्या है?

"तुम नहीं जानते सुदर्शन।" बीना विक्षुब्ध हो उठी "वह बहुत दुखी और चिन्तित रहता है। इस पर परीक्षा इसलिए मैं मौन हूं अन्यथा मैं कोई न कोई निष्कर्ष निकालकर ही दम लेती। मेरे बाप ने मेरे लिए जाने मर को दे दिया है।"

"वह मर्द का अहम् मुझे अच्छा नहीं लगता। म समझता हूं कि आपस में मिलकर दिलों का मैल साफ कर लेना चाहिए।"

तभी घड़ी ने दस बजाए। सुदर्शन यह कहकर हवा की तरह बाहर चला

गया व्यामोह ! बस बन गए हैं। व्यथा से बोझिल वातावरण में उसका दम-सा घुटने लगा। उसे महसूस हुआ कि जिस नारी के पास वह चंद घड़ी हंसने खिलने आता है, वह नारी आजकल मानसिक व्यथा से पीड़ित है। उसमें केवल दुख ही दुख है।

सुदर्शन जैसे ही घर से बाहर निकला वैसे ही उमेश मिल गया। उमेश नजर बचाकर अन्धेरे में खड़ा हो गया। सुदर्शन ने भांप लिया। पूछा "उमेश है क्या?"

अन्धकार में खड़ी आकृति चुप रही।

सुदर्शन ने जोर से पुकारा "उमेश!" फिर वह उसके पास गया। उसे अपनी ओर आते देखकर स्वयं उमेश प्रकाश की ओर बढ़ा।

"घर जा रहे हो?" छूटते ही उमेश ने पूछा।

"हां तुम्हारी प्रतीक्षा करते-करते थक गया फिर क्या करता?" उसने व्यंग्य छिपाकर कहा "तुम इतनी रात गए कहां-कहां धक्के खाते फिरते हो!"

"जिसके भाग्य में जो लिखा होता है उसे वही खाना पड़ता है। मेरे भाग्य में धक्के हैं मैं धक्के खाता हूं तुम्हारे भाग्य में आदर है तुम आदर पाते हो।"

सुदर्शन उमेश के व्यंग्य को समझ गया। उसे बहुत बुरा लगा। तनिक कठोर स्वर में बोला "यह तुम मेरा अपमान कर रहे हो?"

"क्यों!" वह बनावटी विस्मय से चौंककर बोला "अपने भाग्यवाद की बात कह दी तो तुम अपमान समझने लगे? मैं अपने शब्द वापस लिए लेता हूं। फिर तुम मान लो कि धक्के खाने में ही मुझे बेहद आनंद मिलता है।"

सुदर्शन क्या उत्तर देता? थोड़ी देर तक सोचकर बोला "तुम केवल मुझे ही अपनी बात का निशाना क्यों बना रहे हो?"

"नहीं तो? मुझे तो केवल तुम्हारे भाग्य से चिढ़ है। देवतास्वरूप तुम्हारा भाई अपार सम्पत्ति न मां का प्रकोप और न बहू का झंझट। इस पर भाभी, भाभी भी ऐसी जिसका मन क्षण भर के लिए भी देवर से दूर रहना नहीं चाहता और देवर भी अपने व्यापार को छोड़कर भाभी का मन बहला रहा है।"

"यह कोई बुरी बात नहीं है। लेकिन जिस टोन में तुम कह रहे हो वह अपमान सूचक है। उसमें पाप की दुर्गन्ध आ रही है।

पाप ? एक प्रश्न-सा उमेश के मन में आया और निचले ओठ दांत से दाब कर वह बोला "अब इस धरती पर पाप पुण्य कहां रहा ? वह भेद नवीन मान्यताओं के साथ समाप्त हो गया है। मीना मुझसे हंसकर नहीं बोल सकती तुमसे बोल सकती है। मैं जब तक घर में रहता हूं तब तक वह मुस्कराती नहीं। पत्नी की यह प्रवृत्ति पति के मन में कैसी आशंका उत्पन्न कर सकती है ?"

उसका इतना कहना था कि सुदर्शन उबल पड़ा।

"तुम नीचता पर उतर आए हो।

"और तुम...!" कहकर उमेश चुप हो गया। सुदर्शन क्रोध से कांप उठा। जल्दी से कदम उठाकर चला गया।

मीना उमेश को देखते ही वस्त्र को संभालने लगी। उसने उमेश की ओर देखा तक नहीं जैसे उसका आगमन व्यर्थ है। उमेश आकर बिस्तरे पर पड़ गया। एक-दो बार उसने जम्हाई ली। अन्यमनस्क-सा वस्त्र पर दृष्टि जमाता हुआ बोला "सुदर्शन आया था ?"

"हां !"

"क्यों ?"

"इन तीन दिनों में वही तो यहां आकर मेरे सुख-दुःख की पूछ करता है। आपके लिए तो मैं मरी समान हूं।"

"मरी नहीं अब मरोगी यह सुदर्शन तुम्हें मारकर ही दम लेगा।" उमेश की घृणा जोर दे बोली।

"वह बेचारा क्यों मारेगा मारेगी आपकी मां न मालूम क्यों उसे मेरा सुख नहीं सुहाता है।

मेरी मां का नाम मत लो !" वह आपे से बाहर होकर चिल्ला पड़ा "मेरी मां को एक शब्द भी कहा तो अच्छा नहीं होगा। हां कहे देता हूं।"

मीना सिसक पड़ी "तुम्हें क्या हो गया उमेश सास ने हम दोनों के बीच दीवार खड़ी कर दी है। ऐसा मालूम होता तो मैं अपने बाप के साथ झगड़ा करके उसके यहां चोरी करके तुम्हारी मां की इच्छा पूरी कर देती। मैं ऐसा उपेक्षित पीड़ित जीवन यापन नहीं कर सकती। इससे अच्छा है कि तुम मुझे

जान से मार दो।"

"जैसा तुम करोगी वैसा ही तुम पाओगी।"

"यदि ईश्वर का न्याय इसी नीति पर अवलम्बित होता तो मुझे कभी भी दुःख नहीं मिलता। परन्तु ईश्वर का न्याय भी आज के पूंजीवादी युग की तरह अंधा और अनुमान पर दौड़ने लगा है। मुझे एक बात बताना आखिर तुम्हें शिकायत क्या है?"

"कुछ नहीं।

"फिर मुझसे पहले जैसा व्यवहार क्यों नहीं करते?"

"इस प्रश्न का उत्तर तुम स्वयं ढूंढ लो।

वीणा चुप हो गई।

उमेश अपनी दो-चार पुस्तक लेकर चलने लगा। वीणा ने उसे रोककर कहा "आज तुम यहीं पर रुक जाओ मुझे डर लग रहा है। उमेश, मान जाओ।"

उमेश उसे धक्का देकर बोला "जरूरत हो तो सुदर्शन को बुला लो। मैं अब वापस नहीं आऊंगा।"

वीणा पर बिजलियां टूट पड़ीं। उसके तन-बदन में आग लग गई। वह लपककर बाहर की ओर भागी—"उमेश!"

पर उमेश बाहर चला गया था। वीणा वापस आकर अपने बिस्तरे पर निढाल होकर रो पड़ी।

दूसरे दिन ही सवेरे नौकरानी ने आकर बताया "छोटे बाबू कल रात ही कल कत्ता चल गए हैं। उन्होंने जाते हुए मुझे आपके लिए एक संदेश भेजा है। उन्होंने कहा है कि उमेश ने मेरी जीवन पर शक कर लिया है और यह शक आप दोनों के जीवन में विनाशन रंग लाल देगा इसलिए मैं जा रहा हूं। भगवान आप दोनों पति पत्नी को सुखी रखे।"

वीणा पाषाण प्रतिमा की तरह सुदर्शन का संदेश सुनती रही। उसने अपनी गोद से मुन्नू को उतार दिया। मुन्नू चीं-चीं करके रोने लगा। वीणा ने तड़ातड़ उसके दो-तीन थप्पड़ मार दिए। नौकरानी भयत्रस्त होकर अपनी स्वामिनी को

देखने लगी। बीना भागकर अपने कमरे में आ गई और फूट-फूट कर रो पड़ी।

रोने से जब उसका हृदय हल्का हो गया तब उसने नौकरानी को बुलाकर कहा "तुम सुदर्शन की नौकरानी हो इसलिए अभी से तुम्हें छुट्टी मिलती है।"

नौकरानी बीना के रौद्ररूप के सामने गूंगी रही। धीरे-धीरे चली गई।

मुन्नू के साथ गुड्डू भी रोने लगा था। पर बीना भावहीन बैठी-बैठी उन दोनों बच्चों को देख रही थी। उसकी भंगिमा कह रही थी कि वह कहीं और है और है।

उस दिन बच्चों के दूध के अलावा चूल्हा नहीं जला। उमेश को सुदर्शन के जाने की खबर मिल गई थी। वह रात को दस-साढ़े दस बजे लौट कर आया। उसका मुंह भयानक था। बीना डर गई। लेकिन फिर क्रोध में ऐंठकर बोली 'आपको इतना नीचे नहीं गिरना चाहिए।"

"क्या बकती हो!"

"आपने सुदर्शन के चरित्र के बारे में जो भी गलत सोचा है, उसके लिए आपको उनसे क्षमा मांगनी चाहिए।"

"मैं क्षमा मांगूं? वह चीख उठा।

"हां क्या मैं भ्रष्ट स्त्री हूं? क्या मैंने कोई बुरा काम किया है?" वह चिल्लाकर बोली।

"हां-हां तू कुल्टा है, पतित है नीच है।

"चुप रहो नहीं तो।"

"नहीं तो! कहकर उमेश ने बीना के दो चार लात-घूंसे मार दिए।

वह चिल्ला-चिल्लाकर कहने लगी "मारो, और मारो मैं कहती हूं जान से मार दो पर मुझे कुल्टा मत कहो।"

"तू कुल्टा है, कुल्टा है!" कहने के साथ-साथ उमेश ने दो-तीन मुक्के बीना के और जड़ दिए।

मां का पिटते देखकर बच्चे भी रोने लगे। ऐसा भयानक अप्रिय दृश्य हो गया था जैसे चार प्राणियों को किसी ने बन्द करके पटाखे छोड़ दिए हों।

झगड़ा शांत हो गया।

उमेश छत पर टहलने लगा।

बीना के मन में उमेश के प्रति दुर्भावनाओं का स्रोत फूट पड़ा। अक्षय स्वर्ग प्राप्त करने वाली भारतीय नारी अपने पति के अन्त की प्रार्थना करने लगी। वह देवताओं के देश में अमानुषिक अत्याचारों से पीड़ित मनमनमदी विलाप करने लगी ताकि तैंतीस करोड़ सप्राण देवता सीता-सी सतवन्ती स्त्री का संताप तो समझ सकें। वे यह समझ सकें कि वेदों की ऋचाओं में जिस महिमा का गुणगान है जिस अलौकिक सत्ता का दिग्दर्शन है वह इस प्रताड़ित पत्नी के अश्रु का मुकाबला कर सकते हैं? युग भले ही इस सत्य को स्वीकार न करें पर सबको मानना ही पड़ेगा कि अन्तर्दाह से जलकर, आग की भांति निष्कलुष उसका एक भी अश्रु एक ब्रह्म से महान है उसका एक क्रन्दन वज्र से सती अहिल्या के विपुल विलाप से कम नहीं।

छत पर घोर अन्धकार था।

रोते रोते दोनों बच्चे सो गए थे।

मुरदे के समान बीना उठी। संस्कार, समाज और विवाह के बन्धन उसे अर्थहीन आडम्बर के अलावा कुछ नहीं लगे। उसे लगा कि स्त्री को निर्बल करके पुरुषाधीन बनाने वाला मनीषी नारी जाति का सबसे निर्दयी शत्रु था। उसका नारीत्व आहत सांप की भांति संभलकर एक बार फिर उमेश से लड़ना चाहता था।

उमेश ने उसे कुल्टा क्यों कहा?

वह द्वन्द्वयुद्ध के लिए तत्पर जान पड़ी। अब की उसके पति ने उस पर हाथ उठाया तो वह नारीत्व की सीमा का उल्लंघन कर जाएगी। वह मार नहीं खा सकती नहीं खा सकती।

कमरे में उमेश पड़ा था।

बीना ने रुद्ध कण्ठ से पुकारा "आपने मुझे कुल्टा क्यों कहा?"

"भला इसी में है कि अभी तुम यहां से चली जाओ वर्ना मेरे हाथ से किसी का खून हो जाएगा?"

"मैं मरने को तैयार हूं पर पहले इस बात का निर्णय और स्पष्टीकरण चाहती हूं। क्या यह बच्चा तुम्हारा नहीं?"

"नहीं है!"

"यह क्या कहते हो?" बीना पर पहाड़ टूट पड़ा।

"सही कहता हूं।"

बीना सुन्न हो गई। उसकी आंखों के आगे अंधेरा-सा छा गया। वह ग्लानि के मारे अचेत हो गई।

और उमेश एक कोने में बैठकर सिसक पड़ा।

वह कितना अभागा है ?

बीना दूसरे का पाप लेकर भी उससे झगड़ा कर रही है। कैसी निर्लज्ज और पापिष्ठा है यह।

बात विचित्र थी।

बच्चों से तंग आकर उमेश ने अपना आपरेशन करा लिया था। जैसा कि परिवार आयोजन के लिए नियुक्त जन्म निरोधक डाक्टर कहते हैं कि इसका असर दो मास से लेकर छह मास के बाद तक भी रहता है। इन महीनों के बीच गर्भ रहने का खतरा बना रहता है। कुछ महीने पूर्व उमेश के जो फोड़ा हुआ था वह फोड़ा नहीं आपरेशन ही कराया गया था। डाक्टर ने मस्ती से उसे यह नहीं बताया कि अभी खतरा कितने माह और रहेगा। पीठ ठोंककर कहा—आपने देश के हित में तुमने यह आपरेशन कराकर बड़ा भारी योग दिया है। और उसके ठीक दूसरे महीने ही बीना को गर्भ रह गया। बाद में जाकर उमेश ने डाक्टर से पूछा तो डाक्टर ने उसे समझा दिया कि छह माह तक वीर्य के कीटाणु गर्भ के वीर्य में भी रहते हैं। गर्भ रहने की संभावना बनी रहती है। उमेश ने डाक्टर के इस कथन को दूसरे ही अर्थ में लिया। उसने सोचा कि डाक्टर उसे बहला रहा है। मां को लेकर जो घृणा उमेश के मन में बीना के प्रति आयी थी वह नया रूप लेकर प्रकट होने लगी। मुकुन्द का अपने से अधिक बीना पर प्रभाव देख उसके भीतर की हीनता दबे मुंह वाले सांप की तरह फुफकार उठी। एक घृणा भरी अग्नि उसके मन में पनपती गई। हर बात में सन्देह दृष्टिगोचर होने लगा। तब धीरे धीरे उसे मुकुन्द की हर बात में वासना की गंध आने लगी।

अब तक बीना सावधान हो गई थी।

उमेश छत की दीवार पर निर्लज्ज खड़ा था।

बीना गुस्से में सोच रही थी—यह कितना नीचे उतर गया है। धर्म-पूजा सब

खोकर यह मुझे कुत्ता कहता है। उसने देखा कि उसकी बांह से लहू टपक रहा है। वह चीख पड़ी—"देखो यह खून बह रहा है। यदि मेरा खून ही करना चाहते हो तो लो मुझे दीवार से धक्का दे दो।

"मैं कहता हूं कि तू चुपचाप मेरे घर से निकल जा नहीं तो खून करने तक की नौबत आ जाएगी।"

"यहां से निकल कर जाऊं कहां?"

"जिसका यह बच्चा है, उस मिलपाती सुदर्शन के यहां।"

"उमेश!" पहली बार पृथ्वी ने अपनी बेटी के सच्चे विद्रोह को देखा। वह मुस्करा उठी। उर्वरा उर्वी को लगा जैसे अब उसका कण-कण उसके ही रक्त से रचा गया है। जो कण अत्याचार, मिथ्याचार का सामना करने लगा। वीणा ने जोर का चांटा उमेश के गाल पर मार दिया।

"यह बच्चा तुम्हारा है, तुम्हारा!" वह अधिकारपूर्ण स्वर में बोली।

उसके स्वर को कौन सुनता? वह पिल पड़ा। समीप एक टूटी लकड़ी पड़ी थी। उमेश ने उसे लकड़ी से पीटना शुरू कर दिया। वीणा छटपटाकर कह उठी "भगवान तुम्हें उठा ले तुम्हें नरक में भी जगह न मिले।" वही आदमी औरत की आदिम प्रवृत्ति! वही पुरुष के खिलाफ नारी की दुष्कामना भरा एलान।

वीणा अचेत हो गई। उसके सिर से खून बहने लगा और पड़ोसियों ने पहली बार सुना—एक जोर का धमाका। देखा कि उमेश की लाश जमीन पर पड़ी तड़प रही है।

इसके बाद वीणा के मन में घोर परिवर्तन के बादल मंडराने लगे। पहले की तृष्णामयी वीणा मर गई। सास आ गई थी। वीणा अस्पताल में भर्ती थी। उसका गर्भपात हो गया था। रक्तस्राव अधिक होने से वह बहुत दुर्बल हो गई थी। सभी उसे घृणा करने लगे। मां भी कभी-कभी फुसफुसाकर कह देती थीं कि इसी ने अपने पति को मारा है।

वीणा रो पड़ती थी।

एक भैया कभी-कभी आया करते थे। उन्होंने वीणा को आकर एक दिन कहा

अब वह काफी स्वस्थ हो गई थी 'तुम्हारी सास तुम्हारे दोनों बच्चों को लेकर अपनी बहिन के यहां जा रही है। उसका कहना है कि जो कुल कलंकिनी अपने पति को मार सकती है वह अपने बेटों को कैसे जिंदा रख सकती है। यदि वह उसका कहना नहीं मानेगी तो वह अपने बेटे की हत्या का आरोप उस पर लगाकर केस चलाएगी।"

बीना के मन की नारी तड़प उठी। उसने विचलित स्वर में कहा "क्या आप यह मान सकते हैं कि मैंने अपने पति की हत्या की है? मेरी वद्दुआएं अवश्य थीं। पर मैंने उन्हें मारा नहीं है। उन्हें तो भगवान ने अपनी करनी का दंड दिया है। उमेश ने मुझ पर कुल्टा का लांछन लगाया और सास ने पति की हत्यारिन कहा। पर ये दोनों झूठे आरोप हैं। आप विश्वास क्यों नहीं करते?"

'मुझे तुम पर विश्वास है। लेकिन यदि तुमने अपनी सास का कहना नहीं माना तो तुम्हें बड़ा कष्ट उठाना पड़ेगा।"

"आखिर मैं बच्चों को कैसे छोड़ सकती हूं? पति की मृत्यु के बाद एक विधवा के लिए उसके बच्चे ही सर्वस्व हैं। आप मुझे अपने बच्चों से दूर न कीजिए, भैया।"

"बच्चों को मां से विलग करने का मूल्तर अपराध मैं नहीं करना चाहता। मुझे किसी के दिल दुखाने से लाभ ही क्या? पर तनिक तुम सोचो यदि तुम्हारी सास ने मामला अदालत में पेश कर दिया तब इन बच्चों का भविष्य क्या होगा?'

"क्या होगा?"

"मां के न किए हुए पाप की भारी गठरी उनके मासूम मनों पर सदा रहेगी और यह पाप की ग्रंथि उन्हें कभी सुख से नहीं रहने देगी।" चक का स्वर करुणा से ओत-प्रोत था।

बीना कठोर बन गई।

सास ने उसका मुंह तक नहीं देखा। वह बीना के मुंह पर केवल कालिख पोतना चाहती थी और बीना ने अपने बच्चों को चूमना—देखना स्वीकार नहीं किया। वह ऐसी बन गई जैसी वन्ध्या बरती होती है, जिसने कभी प्रसव किया ही न हो।

सास शीघ्र ही अपने दोनों पोतों को लेकर रायपुर चली गई।

वीणा की एक टांग टूट गई थी। टांग की पट्टी खुलते ही वह घर आई और उसने चक्र की सलाह लिए बिना ही अपनी सारी वैयक्तिक सम्पत्ति (जेवर) को अपनी सास को भेंट दे दी—घर के पट्टों के सहित।

तब उसने चक्र को कहा—"मुझे इस शहर के अलावा कहीं ऐसी जगह का काम दिला दो जहाँ मेरा अपना कोई न हो।"

चक्र ने सरजू के नाम चिट्ठी लिख दी।

सरजू की पत्नी गिरिजा का उन्हीं दिनों देहान्त हुआ था वीणा आया बनकर सरजू के घर आ गई। धीरे-धीरे वीणा यह सब भूल गई कि उसका विगत क्या था। उसका अतीत कितना मधुर था। उसके बच्चे भी थे। सुख-स्वप्न काम के पंखों के साथ दूर-दूर तक उड़ते रहे। वीणा दुःख में सुख का आनन्द पाने लगी। वह जानती थी कि उसका इस संसार में कोई नहीं है। तब संसार के प्रति उसका कठोर रवैया बढ़ना ही था। उसकी जबान जरूरत से अधिक स्पष्ट हो गई। उसका ज्ञान विषमय हो गया। इतना ही नहीं वह स्वयं अपने आपको पीड़ा देने लगी। आत्मपीड़ा ने उसकी अनुभूति के दृष्टिकोण को ही बदल दिया। वह आत्महत्या भी कर सकती थी लेकिन उसका सोचना था कि आत्महत्या में पीड़ा एक क्षण भर के लिए मिलती है और उसे शाश्वत वेदना की आवश्यकता थी—धीरे धीरे तिल तिल कर जलना। जलहीन मीन की तरह तड़प-तड़पकर मृत्यु के निर्दयी अंक में सोना।

अतीत को स्मरणकर वीणा पुलकित हो उठी। उसके नयन अश्रुओं से भर आए। उसके अधरों पर मुस्कान थिरक उठी।

अपार आनन्द-वेदना।

अनिर्वचनीय परम सुख-चरम दुःख।

सन्ध्या का सूर्य प्रकृति के आग्रह से क्षितिज का चुम्बन ले रहा था। अनायास क्षितिज का अथाह आलिंगन प्रत्यातुर अनातुर दैवी मिलन की तरह अपनी अनुपम लालिमा बिखेर रहा था।

बीना उस पार देखकर मन ही मन कह उठी, 'मनातुर मधुमासी बेचारी कोमलांगी क्षितिज को बलात् सदैव अनुतप्त कर रहा है।

फिर वह उन्मत्त-सी गुनगुना उठी—

मेरे दुख में सुख शाश्वत।

चिर यौवन चुम्बन पथपथ।

घर में गहरी निस्तब्धता थी। बीना किसको पीड़ा पहुंचाए, यही सोच-सोचकर वह अपने को पीड़ित कर रही थी।

बीना विचित्र और दुसह! अजय और व्यथामयी!

चक्र

जैसे-जैसे मनुष्य व्यथा से उन्मुक्त होने की चेष्टा करता है वैसे-वैसे व्यथा उसके चारों ओर बेल की तरह लिपटती जाती है। गिरिजा की स्मृति सरजू के मस्तिष्क में दिन प्रतिदिन गहरी होती गई। उसका प्रभाव कभी-कभी इतना पीड़ा दायक होने लगता था कि उसकी इच्छा होती थी कि जीवन के समस्त गोरख धन्धों को छोड़कर संन्यास ग्रहण कर ले। लेकिन जिस गति से यह विचार उसके मस्तिष्क में आता था उसी गति से वापस चला जाता था।

कोई-कोई मुवक्किल आ जाता था और फिर सरजू जीवन की चिंताओं से मुक्त होकर कागजों में खो जाता था।

रात्रि का अन्धकार चांदनी के प्रकाश में विलीन हो रहा था। पवन के शीतल झकोरे कमरे में आ रहे थे।

गप्पू पढ़ाई समाप्त करके सोने की तैयारियां कर रहा था। वीणा उसे सुला-कर सरजू के कमरे में आई। सरजू ने वीणा को प्रश्नभरी दृष्टि से देखा। वीणा ने मन्द स्मित से कहा "आपको आश्चर्य होगा कि मैं इस समय आपके कार्य में विघ्न डालने क्यों आ गई?

"हां म चाहता हूं कि अभी तुम मुझे बिलकुल अकेला छोड़ दो, मैं एक विचित्र समस्या में उलझा हुआ हूं।"

"मुझे बताइए, शायद मैं आपकी मदद कर सकूं।"

सरजू वीणा की बात पर चुप हो गया। कहूं या न कहूं—यह वह चंद घड़ी सोचता रहा।

फिर बोला—"बात यह है कि एक पत्नी अपने पति को छोड़ना चाहती है। यह पति मेरा निकट का मित्र है। मने उससे हजारों रुपए कमाए हैं, मेरी इच्छा है कि उसकी इज्जत बची रहे।

वीणा को यह समझते देर नहीं लगी कि मामला संगीन है।

"आखिर वह अपने पति को छोड़ना क्यों चाहती है?" वीणा ने पूछा

"मान लो वह आदमी आदमी नहीं है।"

"मान लो यह अंधा है इससे वह अंधा तो नहीं हो गया ? इससे उसके देखने की शक्ति तो समाप्त नहीं हो गई ? इस 'मान लो' से सत्य का बोध नहीं होता।"

"उसे अपना पति पसंद नहीं है !

"कारण ?"

'वही नारी की चिर तृष्णा और अतृप्ति ! उसका पति बूढ़ा है, पचास वर्ष का और वह बीस वर्ष की।

"इतना अन्तर ? बीना के स्वर में वेदनामिश्रित विस्मय था।

"ऐसी बात नहीं है बीना। पहले मैं जब-जब विमला को देखता था मुझे अपनी मौसी याद हो आती थी। मौसी अपने पति का परित्याग कर चैनू के घर में चली गई। मनुपसन्द की प्राप्ति हो जाने के बाद चैनू ने सभी दुर्गुणों को अपना लिया। वह मौसी को पीटता था मारता था कोस गालियां देता था लेकिन वह सहिष्णु की प्रतिमा बनकर अपने पति का हर अत्याचार सहती थी। ठीक विमला भी इतनी मानसिक यंत्रणाएं सहकर भी प्रसन्न बदन रहती थी।"

"जरूर कोई विवशता थी, आपकी मौसी के साथ अन्यथा क्यों कोई किसी का जुल्म सहे ?" बीना ने अपनी राय जाहिर की।

"हां उसके एक अपाहिज बच्चा था।"

"फिर बात साफ हो जाती है। यदि वह बच्चा नहीं होता तो क्या आपकी मौसी चैनू का जुल्म सहती ?'

"नहीं, फिर वह अपने पहले पति की भांति चैनू को भी छोड़ सकती थी। लेकिन उसके प्रेम को देखकर यह संभव नहीं जान पड़ता था कि मेरी मौसी चैनू को छोड़ सकती है।"

'संभव असंभव की बात छोड़िए, वह जरूर छोड़ती।"

"बस तुम 'स्वार्थ' का मामला यह क्यों नहीं सोचती कि हम सबों के बीच आत्मिक बन्धन नाम की भी कोई वस्तु होती है ?" वह चिढ़ गया। गुस्से में भर आया।

बीना सुनी मुस्कान के साथ बोली "यह आत्मिक बन्धन की बात भी खूब रही। मैं आपसे पूछ सकती हूं कि यह बन्धन किन धागों से बांधा जाता है ?"

"भावना से।"

वीणा खिलखिलाकर हंस पड़ी "तभी पति ने मेरे चरित्र पर सन्देह किया तभी सास ने अपनी बहू को पति की हत्यारिन कहा। तभी एक मां के दो बच्चे समस्त ममता भूलकर चांद-सूरज की भांति प्रबल और तेजस्वी-से बन रहे हैं। कहिए, सरजू बाबू ये सब भावना के धागों से ही बंधे हुए हैं?"

सरजू भल्ला पड़ा "तो तुम समझती हो कि भगवान भावना और आत्मा कुछ नहीं?"

"है क्यों नहीं? हम एक दूसरे के प्रति अच्छी-बुरी 'भावनाएं' रखते ही हैं मन्दिरों में जो प्रतिष्ठापित है—वे 'भगवान' के नाम से युगों-युगों से पूजे जाते आ रहे हैं जो हमारे हृदय में धड़कन है, उसे आत्मा की संज्ञा दी गई है। लेकिन आप इनसे कोई अन्य अर्थ ही लगाते होंगे?"

सरजू कुछ नहीं बोला। उसने एक ठंडी सांस ली।

"आप चुप क्यों हो गए?

"मैं चुप इसलिए हो गया कि आदमी अपना दुखड़ा दूसरों के सामने क्यों रोता है? यहां कोई दर्द बंटाता तो नहीं फिर भीख मांगने की क्या जरूरत?" सरजू के स्वर में रोष स्पष्ट था।

"आपका कहना ठीक है। पर हम भी तो एक गलती कर जाते हैं। बात-बात में बात निकालने की जो प्रवृत्ति है वह हमें अक्सर विषयान्तर कर देती है। आपने मुझसे मदद मांगी मैं देने को तैयार हूं। कहिए?" वीणा के होंठों पर हल्की मुस्कान थी।

"अब कहने की कोई आवश्यकता नहीं है। मुझे भय है कि तुम समस्या को और दुष्कर न बना दो।"

"जैसी आपकी इच्छा। न मैंने पहले आपको विवश किया था और न अब ही करूंगी।"

इसके बाद वीणा ने उठते हुए कहा, "एक नारी दूसरी नारी के मर्म को अच्छी तरह समझ सकती है। मेरे नाते नहीं अपनी नौकरी के नाते ही एक आज्ञा दीजिए। स्वामी-भक्तिनी की तरह उसे मैं पूरा करूंगी।"

सरयू अपनी पैनी दृष्टि जमाकर बोला "तुम्हारे विचारों में बड़ी अस्थि-रता है। कभी मुझसे अधिक बात करना नहीं चाहती और कभी मुझसे बात करते थकती ही नहीं। ऐसी अस्थिरता हितकर सिद्ध नहीं हो सकती।"

वीणा मुस्कुराकर बोली "यह बोलने और न बोलने की बात महत्वपूर्ण नहीं है। लेकिन कभी-कभी मैं आपसे चकित जरूर हो जाती हूं। मिरिया के मर जाने के बाद आपके मन में भी अस्थिरता उत्पन्न हो गई है। इसके पहले आप बड़े से बड़े मुकदमे में परेशान नहीं होते थे। जैसा कि चाचा भैया का कहना है कि अधिक-तर आप झूठ को सच साबित करने के ही मामले अपने हाथ में लिया करते हैं। धार को जोर कायम न होने देना ही आपकी विशेषता है। फिर इस जरा-सी बात से आपका विचलित होना कुछ जंचता नहीं।"

सरयू भावावेश में हो उठा "इसे तुम जरा-सी बात कहती हो? एक नारी जो कल तक अपने पति को देवता की भांति पूजती थी आज एकाएक उसे छोड़ने को प्रस्तुत हो गई है और तुम उसे साधारण घटनामात्र ही समझती हो? मेरा मित्र बहुत बड़ा व्यापारी है, उसकी इज्जत धूल में मिल जाएगी। वह बेचारा ?"

"उसकी शादी कैसे हो गई?"

"गरीबी क्या नहीं करा देती? लड़की के बाप ने अपनी बेटी के बदले एक बड़ी रकम ली थी। कल उसका बाप आया था। उसने अपनी बेटी के सामने अपनी पगड़ी रखकर प्रार्थना की कि क्यों मेरे बुढ़ापे को बिगाड़ रही हो जो तुम्हारे भाग्य में लिखा था वह तुम्हें मिल गया? उस लड़की विमला ने क्या उत्तर दिया? वह कड़ककर बोली कि बाप की इज्जत बेटी के जीवन से बड़ी नहीं है।

"जाओ बेटी सब कुछ जाकर भी आदमी का कुछ नहीं जाता लेकिन गई हुई इज्जत कभी लौटकर नहीं आती?

" बात ठीक कहते हैं लेकिन यदि आपकी विमला ने आत्महत्या कर ली फिर यह भी नहीं आएगी। लोग कहते हैं कि मनुष्य की सबसे बड़ी निधि उसकी इज्जत है और मैं कहती हूं कि प्राणों का जतन। मुझे यह बात अधिक मजबूत लगी कि—जो है सो परान है। विमला का इतना कहना था कि उसके पिता भड़क उठे,

सकी इज्जत नहीं वह आदमी जीते जी मरा हुआ है। विमला ने उत्तर दिया
ी पिताजी आप शांति से सोचिए, एक औरत आज अपनी इज्जत बचाती है वही
रत कल आपके समाज में रूप बदलकर पूजनीय बन जाती है। अहिल्या ऐसी ही
मी हुई महासती है। कई सेठ दिवाला निकालकर समाज में शीघ्र ही नाम बदल
र पूर्ववत् प्रतिष्ठा पा जाते हैं। वेश्यागामी सूरदास भक्त कवि कहलाते हैं। डाकू
ाल्मीकि आदिकवि बनकर रामायण की रचना करते हैं। बृहस्पति अपनी भाभी के
ाथ बलात्कार कर देवताओं के गुरु बन जाते हैं। भगवान शंकर मोहिनी रूप के रहस्य
ो जानकर भी उद्दाम वासना के वशीभूत होकर भाग खड़े होते हैं। कुमारी 'मेरी'
ौमार्य में भी पुत्र उत्पन्न करके करोड़ों की मां कहलाती है। फिर भी उनको सारा
समाज इज्जत की दृष्टि से देखता है। जिस इज्जत की व्याख्या आप कर रहे हैं,
उस इज्जत की कसौटी पर खरा इस धरती का कोई भी व्यक्ति तो क्या उस
आकाश के तेतीस करोड़ देवता भी नहीं उतरेंगे। यदि वे इज्जत के भय से मर
जाते तो ? उनके नाम के आगे शून्य का अदृश्य आवरण छा जाता। अतः जीवन
अधिक महत्त्वपूर्ण है। मनुष्य जिन्दा रहकर अपने कुकर्मों को भुलाता है अपने
जीवन को किसी न किसी के लिए सार्थक करता है तब उसे पुन प्रतिष्ठा प्राप्त
हो जाती है। इसलिए जीवन महान है। उसके पिता जो पराजित हो गए बोला
लेकिन उन्होंने एकाएक उछलकर विमला के गाल पर दो चार चाटे रसीद कर
दिए और हवा की तरह चले गए। वे अस्पष्ट स्वर में चिल्ला रहे थे, 'यह अपने
बाप का नाम निकालेगी जरूर निकालेगी। चांटे खाकर विमला क्रोधित
नहीं हुई। उसका अवश्य भर आया। वह कांपते ओठों से बोली कि पाप
करने वाला प्राणी कितना निर्भय होता है? इज्जत बेचने वाला इज्जत के लिए कैसे
जमीन-आसमान एक कर सकता है? इसके बाद मैंने उसे समझाया। कहा यह
किसी के हक में उचित नहीं रहेगा। पर वह नहीं मानी। उसका एक ही उत्तर
था कि मैं कहां तक अपने आपकी रक्षा करूं? वकील साहब आप यह क्यों नहीं
समझते कि मैं कमजोर औरत हूं। फिर यहां के वातावरण में मैं कोई महापाप
कर दूंगी तो? इस महापाप की व्याख्या उसने नहीं की। "बीता कल रात मैं
इस कारण सो नहीं सका। बड़ा चिन्तित व उद्विग्न रहा। तब मुझे निरिमा की

बड़ी याद आई।"

"और मन्नू की नहीं ?" हठात् मीना ने कहा।

यह वाक्य मर्मभेदी तीर की तरह उसके दिल पर लगा।

"तुम बड़ी निष्ठुर हो।" सरजू तुरन्त बोला, "तुम दबे हुए दुख को कुरेदती हो। तुमने गिरिजा को नहीं देखा। यदि देख लेती तो तुम्हें यह कहते जरा भी संकोच नहीं होता कि उसे भूलना अत्यन्त कठिन है।"

"फिर आप मेरी बात मानिए।"

"वह क्या ?"

"दूसरी शादी कर लीजिए।"

"क्यों ?"

"गिरिजा का प्रभाव कम होता-होता समाप्त हो जाएगा जिससे आपको मानसिक आराम मिलेगा। फिर एक वकील के लिए मन स्थिति का ठीक रहना बहुत ही जरूरी है।"

न जाने सरजू उसके इस कथन पर अशान्त क्यों नहीं हुआ। वह धीर-गंभीर आकृति से मीना को अपलक देखता रहा। उसकी दृष्टि में रहस्य झलक रहा था। विविध संघर्ष हिलोरें मार रहा था। अचानक सरजू के अधरों पर कुटिल मुस्कान थिरक उठी। वह भौंहें नचाकर मृदु स्वर में बोला, "प्रस्ताव काबिले तारीफ है। मुझे जल्दी ही विवाह कर लेना चाहिए। पर मैंने तय किया है कि विवाह उसीसे करूँगा जो मुझे अच्छी लगती है। मैं जानता हूं कि वह युवती जिससे मैं विवाह करना चाहता हूं अपने आपसे बहुत ही घृणा करती है पर मैं केवल उसको ही प्यार कर सकता हूं।"

मीना इधर-उधर ताकने लगी। घबराकर बोली, "वह युवती कौन है? बताइए।"

"तुम!"

"मैं!" बिजली-सी गिरी मीना पर, "मैं किसी से शादी नहीं कर सकती।" वह दृढ़ता से बोली, "मैं विधवा हूं।"

"और मैं विधुर हूं।"

"मैं विवाह के दुष्परिणाम को देख चुकी हूं।"

"मैं विवाह के अपरिसीम आनन्द को भोग चुका हूं।

"मैं चरित्रहीन हूं क्योंकि मैंने अपने पति के होते हुए एक अन्य पुरुष को अपने मन का केन्द्र बनाया।" वीणा अपना बचाव करने लगी।

"मैं उससे भी पतित हूं। मैं सदा गिरिजा को यह कहकर धोखा देता रहा कि मैं ब्राह्मण हूं और जब वह विवाह के पहले मां बनी तब मैंने उसे इस रहस्य से परिचित कराया कि मैं एक धोबी हूं। कदाचित यह धोखा उसके मन में ग्रन्थि बनकर अटक गया हो और वह उस की पीड़ा से चल बसी हो।"

वीणा सरजू को इस तरह देखने लगी जैसे वह अत्यन्त रहस्यपूर्ण है। वह विद्वेष से बोली "फिर मुझे निष्ठुर कहते हो? मैं अब इस नतीजे पर पहुंची हूं कि तुम धोबी भी नहीं हो बल्कि तुम कोई डोम-चमार हो। मैं कल ही यहां से चली जाऊंगी। मुझे तुम्हारी नौकरी की जरूरत नहीं।" वह आवेश में भर उठी।

"यह क्या कह रही हो? सत्य के उद्घाटन का प्रारम्भ तुमने ही किया था। मैं तो होड़ में पीछे रहना नहीं चाहता था।

"अच्छा किया नहीं तो मैं यह कैसे जानती कि प्राणी कितना छल-कपट और झूठ-सच से भरा है।"

"हां मैं भी यह कैसे जानता जिसे तुमने आज तक छिपा रखा था। वीणा हम एक दूसरे से बड़े पापी हैं। सम्मानित पातकी। फिर भी हम अच्छे वस्त्र पहनकर रहते हैं ताकि लोग हमें पहचाने नहीं। तुम तपस्विनी का जीवन व्यतीत करती हो और मैं प्रसिद्ध वकील का। कदाचित् मैं शीघ्र ही सरकारी उच्च पद पर आसीन हो जाऊं और मुझे न्याय करना पड़े।

"यदि न्याय की बागडोर तुम्हारे हाथ में आ गई तो मैं समझती हूं कि सत्य रहेगा ही नहीं।"

पहली बार सरजू को आनन्द आया कि उसने वीणा को पराजित कर दिया। उसके कौशल के समक्ष वह मर्यादाहीन शब्दों-सी हो गई। पहली बार उसके मन में सरजू के प्रति घृणा का भाव उत्पन्न हुआ। अपनी जीत देखकर सरजू ने एक बार फिर पृच्छा की "क्यों वीणा, तुमने क्या सोचा? बोलो विवाह करने को तैयार हो?

मुझमें और तुझमें कोई अन्तर नहीं। एक ने पत्नी होकर पति को छला और दूसरे ने पति होकर पत्नी को धोखा दिया। दोनों में एक-सा दम फिर उसका सुन्दर प्रायश्चित्त क्यों न कर लें ?

बीना निरुत्तर रही। वह कांप रही थी।

सरजू ऊलजलूल कहता ही गया। बीना उठकर चली गई।

अब रात विशेष गहरी हो गई थी।

बीना ने विमला से सरजू को बिना पूछे ही भेंट की।

अपने परिचय में उसने कहा मुझे आपके पति के मित्र वकील सरजू बाबू ने भेजा है। उनके कथनानुसार एक नारी दूसरी नारी के मन को अच्छी तरह समझ सकती है। म आपके मन को नहीं उद्देश्य को सुनने आई हूं। क्या यह निश्चित है कि आप अपने पति को तलाक देंगी।

विमला बीना की यह बात सुनकर चौंक पड़ी। प्रारम्भ में बीना द्वारा जो विचित्र प्रश्न किया गया था उसने विमला को जरा सावधान कर दिया।

वह बीना का घूरती हुई बोली मैं आपके प्रश्न का मतलब नहीं समझी। आखिर वकील साहब ने मुझे समझ क्या रखा है ? मैंने उन्हें स्पष्ट कह दिया है कि समझौते का प्रयत्न व्यर्थ है। मैं निस्सन्देह अपने मौजूदा पति से मुक्त होना चाहती हूं।"

"मैं आपके विचार से सहमत हूं।"

"आप मेरे विचार से सहमत होकर वकील साहब की ओर से वकालत क्यों करने आई है ?

"मैं उनकी नौकरानी हूं। स्वामी की आज्ञा का पालन करना मेरा धर्म है लेकिन मैं नारी जाति को इस तरह मिटते हुए नहीं देख सकती। म आपको साहस बंधाने आई हूं कि आप अपने निर्णय पर अटल रहें।" बीना ने दृढ़ता से कहा।

विमला ने कहा "आप विधवा हैं या कुंवारी ?"

"विधवा।"

"आपकी मांग में सिन्दूर नहीं है।"

बीना चुप रही।

विमला ने कहा, "विधवा बनने के पहले ही मैं अपनी माँग के सिन्दूर को धारण कर चुकी क्योंकि विधवा हो जाने के बाद न मालूम नारी जाति में विचित्र कमजोरी का समावेश क्यों हो जाता है? वह कुछ करने की अपेक्षा अपने आपको अधिक पीड़ा देने लगती है।"

"आपका कहना ठीक है।"

"फिर आप विवाह कर लीजिए। जब आप मुझे हिम्मत बंधवाने आई हैं तब मेरा भी फर्ज एक मित्रता के नाते यह हो जाता है कि आपको ऐसी सलाह दूं जो पुरानी रूढ़ियों का तोड़-फोड़ डाले।"

"यह संभव नहीं है।"

"क्यों?"

"विवाह के बाद पति का जो अत्याचार मिला, उससे मैं कभी दुबारा ऐसी भूल नहीं कर सकती।"

"ओह!" विमला ने आह छोड़कर कहा "तो आप वकील साहब को कह दीजिए कि विमला देवी अपनी प्रतिज्ञा पर अटल है।"

उस दिन विमला ने बीना से अधिक बातें नहीं कीं। लेकिन धीरे धीरे बीना ने विमला पर अपना प्रभाव जमा लिया। बीना प्रायः दोपहर को विमला के पास चली जाती थी। शरद् को उसने बता दिया था कि वह विमला को अपने इरादे से हटा रही परन्तु प्रतिक्रिया जैसी वह चाहती थी वैसी होती गई। विमला अपने पूर्व निर्णय पर अटल थी।

इस बीच सुदर्शन का विवाह हो गया। उसने बीना को विवाह का निमन्त्रण-पत्र भी नहीं भेजा। इससे बीना को एक मानसी को बड़ा कष्ट हुआ। उसने भाई को इसकी शिकायत भी लिखी जिसका उत्तर भाई ने इस तरह दिया—"अभी-अभी मैं चारों धाम की यात्रा करके आ रहा हूं। इस यात्रा में मैं विभिन्न प्रान्त देख और विभिन्न लोगों से मिला। क्या छोटे और क्या बड़े क्या गरीब और क्या अमीर, क्या अच्छे और क्या बुरे—इन सबके बीच मैंने मनुष्य के सुख की भावना 'तृष्णा' को व्यापक रूप में पाया है। सच तो यह है कि बीना, हम अपने आपको

मुझमें और तुममें कोई अन्तर नहीं। एक ने पत्नी होकर पति को छला और दूसरे ने पति होकर पत्नी को धोखा दिया। दोनों में एक-सा दम फिर उसका मुख्तर प्रायश्चित्त क्यों न कर लें ?

बीणा निरुत्तर रही। वह कांप रही थी।

सरजू ऊलजलूल कहता ही गया। बीणा उठकर चली गई।

अब रात विशेष गहरी हो गई थी।

बीणा ने विमला से सरजू को बिना पूछे ही भेंट की।

अपने परिचय में उसने कहा "मुझे आपके पति के मित्र वकील सरजू बाबू ने भेजा है। उनके कथनानुसार एक नारी दूसरी नारी के मन को अच्छी तरह समझ सकती है। मैं आपके मन को नहीं उद्देश्य को सुनने आई हूं। क्या यह निश्चित है कि आप अपने पति को तलाक देंगी।

विमला बीणा की यह बात सुनकर चौंक पड़ी। प्रारम्भ में बीणा द्वारा जो विचित्र प्रश्न किया गया था उसने विमला को बड़ा सावधान कर दिया।

वह बीणा को घूरती हुई बोली "मैं आपके प्रश्न का मतलब नहीं समझी। आखिर वकील साहब ने मुझे समझ क्या रखा है ? मैंने उन्हें स्पष्ट कह दिया है कि समझौते का प्रयत्न व्यर्थ है। मैं निस्सन्देह अपने मौजूदा पति से मुक्त होना चाहती हूं।"

"मैं आपके विचार से सहमत हूं।"

"आप मेरे विचार से सहमत होकर वकील साहब की ओर से वकालत क्यों करने आई हैं ?"

"मैं उनकी नौकरानी हूं। स्वामी की आज्ञा का पालन करना मेरा फर्ज है लेकिन मैं नारी जाति को इस तरह पिसते हुए नहीं देख सकती। मैं आपको साहस बंधवाने आई हूं कि आप अपने निर्णय पर अटल रहें।" बीणा ने दृढ़ता से कहा।

विमला ने कहा "आप विधवा हैं या कुंवारी ?

"विधवा।"

"तभी मांग में सिन्दूर नहीं है।"

बीना चुप रही।

विमला ने कहा "विधवा बनने के पहले ही मैं अपनी मांग के सिन्दूर को धास्वत कर सूंपी क्योंकि विधवा हो जाने के बाद न मालूम नारी जाति में विचित्र कायरता का समावेश क्यों हो जाता है? वह कुछ करने की अपेक्षा अपने आपको अधिक पीड़ा देने लगती है।

"आपका कहना ठीक है।

फिर आप विवाह कर लीजिए। जब आप मुझे हिम्मत बंधवाने आई हैं तब मेरा भी फर्ज एक मित्रता के नाते यह हो जाता है कि आपको ऐसी सलाह दूं जो पुरानी रूढ़ियों को तोड़-फोड़ डाले।

"यह संभव नहीं है।

क्यों?

विवाह के बाद पति का जो अत्याचार मिला उससे मैं कभी दुबारा ऐसी भूल नहीं कर सकती।

"ओह!" विमला ने आह छोड़कर कहा "तो आप वकील साहब को कह दीजिए कि विमला देवी अपनी प्रतिज्ञा पर अटल है।"

उस दिन विमला ने बीना से अधिक बातें नहीं कीं। लेकिन धीरे धीरे बीना ने विमला पर अपना प्रभाव जमा लिया। बीना प्रायः दोपहर को विमला के पास चली जाती थी। सरजू को उसने बता दिया था कि वह विमला को अपने इरादे से हटा लेगी परन्तु प्रतिक्रिया जैसी वह चाहती थी वैसी होती गई। विमला अपने पूर्व निर्णय पर अटल थी।

इस बीच सुदर्शन का विवाह हो गया। उसने बीना को विवाह का निमन्त्रण-पत्र भी नहीं भेजा। इसका बीना को एक भाभी को बड़ा कष्ट हुआ। उसने चक्र को इसकी शिकायत भी लिखी जिसका उत्तर चक्र ने इस तरह दिया—"अभी-अभी मैं चारों धाम की यात्रा करके आ रहा हूं। इस यात्रा में मैंने विभिन्न प्रान्त देखे और विभिन्न लोगों से मिला। क्या छोटे और क्या बड़े क्या गरीब और क्या अमीर, क्या अच्छे और क्या बुरे—इन सबके बीच मैंने मनुष्य के सुख की घातक 'तृष्णा' को व्यापक रूप में पाया है। सच तो यह है कि बीना हम अपने आपको

पीड़ित करके भी दुःख के मूल स्रोत तृष्णा को समाप्त नहीं कर सकते। कौन किसको बुलाता है और कौन किसका नहीं बुलाता इस प्रश्न को ही समाप्त कर देना चाहिए। जब मृदरान ने लिखा कि म आपके बिना विवाह नहीं करूंगा तो मैंने क्या उत्तर दिया? सुनोगी तो आश्चर्य करोगी। मैंने उसे लिखा कि तुम मेरे छोटे भाई हो। मैं विराट दीपक हू उसके तुम लघु। हममें और तुममें ज्योति भी एक है पर मेरा पाना अति दुर्लभ है। मैं सदा अपने में मस्त रहता हूं। यदि तुम मुझे व्यस्त कराते तो फिर तुम्हारा भैया तुमसे सदा सदा के लिए विलग हो जाएगा। इस प्रकार का निरर्थक हठ मुझे कतई पसन्द नहीं। यदि तुम शादी करना चाहते हो तो कर लो अन्यथा विचार को बदल दो। क्योंकि म शादी पर नहीं आऊंगा। मैं अभी तीन-चार वर्ष तक भ्रमण करना चाहता हू मन-तन और सर्वत्र! यह हरिद्वार है जहां से मैंने तुम्हें और सुदर्शन को पत्र लिखा। यह पत्र तुम लोगों के पास पहुंचेगा तब तक म बहुत दूर, निकल जाऊंगा। तब मैं तुममें से किसी को भी पत्र नहीं लिख सकूंगा।

"बीणा! जीवन के विरुद्ध विद्रोह करना उचित नहीं है। यदि तुम किसी अन्य के अनुकूल या मित्र नहीं बन सकती तो कम से कम अपने प्रति ही अनुकूल बन जाओ। अपने आपकी सखी बन जाओ।

"कभी-कभी मेरे हृदय में तुम्हें लेकर पीड़ा का संचरण होता है। तब मुझे प्रतीति होती है कि यह आत्मपीड़न की प्रवृत्ति तुम्हें मृत्यु की ओर घसीट रही है।

"इस बार तुमने अपनी नई सहेली का जिक्र किया। यह नई सहेली तुम्हारी भांति एक पहेली है। उसका पति बूढ़ा है और वह अपने पति को तलाक देना चाहती है। वह अपने हठ पर अड़ी हुई है। वह किसी भी शर्त पर समझौता करने को तैयार नहीं है। और करे भी क्यों? तुम्हारी सखी जो ठहरी! फिर भी उस बिमला को मेरी ओर स निवेदन करना कि मनुष्य का हर बीता क्षण उसे मृत्यु की ओर ल जाता है। इसलिए उस तीन मार्गों में अत्यन्त सावधानी स चलना चाहिए— शैशव, यौवन और जरा। ये क्रमश जीवन की वे गुम्बद सीढ़ियां हैं जिनको पार करके मनुष्य मृत्यु के द्वार पर जाता है।

"तुमने लिखा कि उसका पति समाज का सम्माननीय व्यक्ति है। व्यापारियों में

उसकी बड़ी प्रतिष्ठा है। उसने अपनी बीबी के लिए जीवन के समस्त श्रेष्ठ साधन जुटा रखे हैं लेकिन उसके पास एक वस्तु नहीं है वह है उसका पौरुष! पौरुष के अभाव में वह अपनी पत्नी अर्थात् तुम्हारी सखी विमला के मन को नहीं भाता। लेकिन अपनी सखी विमला से एक निवेदन करना कि क्या एक औरत इस सुख के अभाव में जीवन के अन्य समस्त सुख नहीं भोगना चाहती? उसका कहना होगा कि नारी इस उत्तेजित सुख से वंचित रहकर जीना ही नहीं चाहती। यह व्यर्थ का सोचना है। इस प्रकार का निर्णय हमारी निर्बुद्धि का सूचक है। आज के भौतिक-युग में हम एक वस्तु को भूल जाते हैं—वह है आत्मबल! इस में सब शक्तियों में बड़ी तो मनुष्य की महाशक्ति! क्योंकि आज के प्राणी आत्मा 'भगवान' और 'धर्म' नामों से इस भांति चौंकते हैं जिस तरह सांप शब्द से बैल। लेकिन मैं इन नामों से नहीं चौंकता। मुझे श्रद्धा है। जहां आज के मनीषी युग चेता और प्रगतिशील कलाकार नारी को सतत संघर्ष करने वाली पुरुषों के समक्ष न झुकने वाली चित्रित करते हैं वहां एक विचार विरोध की भांति मेरे मन में उत्पन्न होता है कि एक सुख के अभाव में नारी पुरुष का सम्बल ही क्यों लेती है? नारी को नर चाहिए ही क्या यह दुर्बलता एक नारी की महान् पराजय की द्योतक नहीं? क्यों विमला को एक ऐसा नर चाहिए जो उसे तृप्ति दे सके? मैंने कई संन्यासी व साधु युवक देखे हैं जिन्होंने इस दुर्बलता पर विजय पा ली है। मुझे एक लड़की वृन्दावन में मिली थी। उस युवती का मामला तुम्हारी विमला से काफी मिलता-जुलता था। उसने भी अपने पति को छोड़ दिया था क्योंकि उसका पति पौरुषहीन था। अदालत में मामला चला था। न्यायाधीश ने निर्णय देते हुए कहा 'यह प्रमाणित हो गया है कि इसका पति पौरुषहीन है अतः कानून अनुसार इनका तलाक मंजूर किया जाता है' उस युवती ने मुझे बड़े संकोच से बताया कि उसके पति ने उसके संग सदा अत्यन्त उपेक्षापूर्ण व्यवहार रखा। उसे मानस-पीड़ा। लेकिन पति से मुक्त हो जाने के बाद उसको क्या मिला? पहले उसने दूसरा विवाह करना चाहा फिर वह अपने देवर पर बुरी तरह आसक्त हुई। परिणाम यह निकला कि देवर ने जो कि प्राचीन विचारधारा का नागर युवक था, अपनी भाभी को पतित और कुल्टा जैसे विशेषणों से सम्बोधित किया। वह —

नारी की प्रतिहिंसा जाग उठी। एक दिन उसने अपने देवर पर बलात्कार का झूठा आरोप लगा दिया। पुलिस ने उसके देवर को पकड़ लिया। उस युवती ने मुझे रोकर कहा कि उसका देवर बिलकुल निर्दोष था। उसने उसकी ओर कभी देखा तक नहीं। वह उसकी बड़ी इज्जत करता था। अब उस युवती के पाप का जीवन प्रारम्भ होता है। ऐसा पाप जिसने उस युवती को चिरन्तन नारकीय यातना में ढकेल दिया। देवर के प्रति अपनी विपुल वासना का उद्दाम लेकर जब वह उसकी ओर बढ़ी और अपमानित हुई तब उसने अपना रुख बदल लिया। इल्जाम झूठा था अतः डाक्टर को अपनी ओर मिलाना जरूरी था। इस पूँजीवाद का दूषित व्यक्ति अपनी हर नैतिकता बेचकर एक ही वस्तु खरीदना चाहता है, वह है—पैसा। डाक्टर ने स्पष्ट शब्दों में उसे कह दिया कि वह इतना रुपया लगा। रुपया देना पड़ा और उस पर अपना नारीत्व! तत्पश्चात वह और फसता ही गया। आज वह पापिन वेश्या का जीवन यापन कर रही है। इधर वह अपने पापों का प्रायश्चित करने आई है। बड़ी दुखी और अशान्त है। कहती है कि अब मैंने एक पुरुष तो क्या सैकड़ों पुरुष देख लिए हैं लेकिन जो सुख-सन्तोष उस व्यथा में था वह अब अतुल सम्पत्ति की स्वामिनी होने के बाद भी प्राप्त नहीं है। समाज के नीच और कुत्सित वर्ग की मैं वह महापापिष्ठा हूँ जिसके अधरों का पान बड़े-बड़े सनातनी मौलवी और पंडित करते हैं पर हाथ की रोटी नहीं खा सकते। उसके स्पर्श का भय जहर से कम नहीं। वह फूट-फूट कर रो पड़ी थी। मुझे उस पर दया आ गई। मैंने उससे निवेदन किया कि क्या वह पुनः उसी सुख और संतोष को प्राप्त नहीं कर सकती? उसे चाहिए कि वह तमाम झमेलों को छोड़ कर सात्विक जीवन बिताए। मेरे इस प्रश्न पर वह चौंककर बोली कि अब वह उस जीवन से कैसे मुक्त हो सकती है? पहले वह अकेली थी और अब उसके जीवन के साथ आठ-दस प्राणी और बंधे हैं। वे इतने अकर्मण्य और निकम्मे हो गए हैं कि यदि उसका आश्रय उन्हें नहीं मिला तो वे बड़े से बड़े संकट में पड़ सकते हैं। यह मानवीय बन्धन और दुर्बलता है।

"अभी विमला इसी लघु आवर्तन में आवेष्टित है। उसका दुःख भी उसी के अनुसार छोटा है पर इसके बाद मैं नहीं समझता कि विमला को भविष्य की किस

दुर्दान्त हिंसा से टकराना पड़े। और हां इसी बीच मेरी एक ऐसी रमणी से बद्रीनाथ जी के रास्ते में भेंट हो गई। चालीस-पचास वर्ष की वह रमणी थी। साधनिक की भांति प्रशांत मन वाली। शैशव से जिसने प्रभु की उपासना में अपने जीवन के क्षण व्यतीत करने प्रारम्भ किए। आजन्म कौमार्य व्रत उसने बिना कष्ट के रखा। उसने कहा नारी स्वयं अपनी स्वामिनी है, उसका दूसरा कौन स्वामी हो सकता है? अपनी तृष्णाओं को दमन करके वह एक ऐसे स्वामी को प्राप्त करती है जो उससे कभी छल प्रपंच और उस पर अन्याय नहीं करता।

मैं विश्वास करता हूं कि इस 'दमन' के नाम को सुनकर आधुनिक विज्ञजन चौंकेंगे—मनुष्य अपना दमन क्यों करे? मैं कहता हूं कि मनुष्य अपनी कुछ इच्छाओं का दमन न करें तो क्या वह घड़ी भर भी चैन पा सकता है? बीना! यह जीवन अनेक अभावों एवं विषमताओं से घिरा है। यहां हमें कुछ छोड़ना पड़ता है और कुछ नया अपनाना पड़ता है। सद्गुण' ही आज के जीवन का सही मार्ग हो सकता है।

अपनी विमला को भगवान बुद्ध का एक मंत्र सुनाना—आरोग्य परम लाभ है। सन्तोष परम धन है। विश्वास परम बन्धु है। निर्वाण परम सुख है। इस उपदेश के शब्दों को हेर-फेर कर सकती हो। संज्ञाओं के विशेषण भी इधर-उधर किए जा सकते हैं लेकिन मूल' बात में कोई अन्तर नहीं आएगा।

"आशीर्वाद सहित।

—चाचा"

बीना ने चाचा के इस खत का जिक्र विमला से कर दिया। विमला ने बड़े ध्यान से उस खत की एक-एक पंक्ति पढ़ी। विमला के मन में इस पत्र की घोर प्रतिक्रिया हुई और वह अपनी मधिम प्रतिमा से विचलित होने लगी।

लेकिन पत्र की समाप्ति के पश्चात् गंभीर मौन विश्लेषण करके विमला ने अप्रत्यक्ष उपेक्षा से कहा "मुझे उपदेशात्मक शब्दावली एवं महान विचारों पर हार्दिक श्रद्धा नहीं है। वे साधु-बैरागी किसी 'अभाव' व क्षति' के शिकार होते हैं। घृणा ही इनके हृदय की वास्तविक भावना होती है। अपने जीवन की असफलता

अथवा पाप को छिपाने के लिए वे असाधु शब्दों का निर्माण कर लेते हैं जो सुनने में प्रभावशाली लगते हैं किन्तु उनका क्रियात्मक रूप अत्यन्त दुष्कर होता है। "वे हिप्नोटिज्म जानते हैं। लोगों के सीधे-सादे जीवन में भारी-भरकम विचारों से बड़ी-बड़ी उलझनें डाल देते हैं। मेरी ओर से उन्हें नमस्कार जरूर लिख देना। यह भी लिखना कि विमला अपना इरादा नहीं बदल सकती।"

वीणा विमला से यह उत्तर पा न जाने क्यों सुख के साथ व्यग्रता का अनुभव करने लगी।

वह जब घर लौटी तब सरजू अपने कमरे में बैठा सिगरेट पी रहा था। अप्पू पिल्ली से बातचीत कर रहा था।

वीणा ने पुकारा "अप्पू तुमने नाश्ता कर लिया ?

"हां।"

सरजू ने अन्दर से ही पुकारा "अप्पू जरा वीणा जी को भेज दो न ?"

वीणा अन्यमनस्क-सी आई। सरजू ने विहँस कर पूछा "तुमने क्या इरादा किया ?"

"किस बात का ?

"विवाह की बात का। मैंने तय कर लिया है कि मैं तुमसे ही विवाह करूंगा।"

वीणा तनिक नाराजगी से बोली "मैंने दूसरी नौकरी ढूंढ ली मैं यहां से शीघ्र चली जाऊंगी।"

"समस्या यह नहीं है।

"समस्या कैसी भी हो लेकिन मैं अब यहां नहीं रह सकती। मुझे अब यह शहर छोड़ना ही है। सच बात यह है कि मैं अस्थिर मन की हूं अतः मैं कहीं भी स्थिरता से नहीं रह सकती। मैं कल ही विमला से पत्र लेकर उसके मैके चली जाऊंगी।" कहते-कहते वीणा की आकृति काफी गम्भीर हो गई।

"लेकिन वीणा अप्पू तुमसे काफी हिलमिल गया है। उसे तुम्हारा अभाव बुरी तरह खटकेगा। जरा सोचो न तुम्हारे बिना उसका क्या हाल होगा ?"

वीणा सरजू की आन्तरिक प्रसन्नता प्रेरक धृष्टता को भांप गई। तनिक खिन्न स्वर में बोली "नौकरानियां किसी स्वामी का जिन्दगी भर का ठेका नहीं ले

सकती।" फिर अपने कमरे में आकर अपने आपसे बोली "अब यहां रहना खतरे से खाली नहीं है। यह छोटी बात का ठहरा न जाने कब मनुष्यता छोड़कर कुकर्म कर बैठे। मैं चलकर विमला के यहां चली जाऊंगी। "नहीं वहां जाना उचित नहीं होगा। विमला अपने पति को तलाक दे रही है। उसके पीहर वाले मुझे उसकी भावली समझकर न जाने क्या-क्या सोचने लगे ? कहीं गुस्से में वे मुझे ही खरी खोटी सुनाने लगे तो ? नहीं मैं वहां नहीं जाऊंगी। फिर ? कुछ भी हो मैं अब यहां नहीं रहूंगी। कहीं भी चली जाऊंगी। सात-छह माह तक मैं कहीं भी रह सकती हूं। कल ही मुझे यहां से चले जाना होगा।

दूसरे दिन बीना विमला से मिलने गई। विमला उसका बदला इरादा देख कर बिफर पड़ी "तुम मेरे घर क्यों नहीं आतीं ? मने अपने पति को तलाक दिया है मैंने अपने बाप की इज्जत उछाली पर तुमने नहीं। फिर तुम्हें भय किस बात का ?"

बीना निरुत्तर रही। सोचती रही और अन्त में बोली "जहां का वातावरण गंभीर हो विपाक्त हो वहां अनर्थ हो जाने की संभावना रहती है।

"फिर तुम मेरे पास ही रहो। विमला ने नया सुझाव रखा।

"नहीं मैं यहां नहीं रहूंगी।"

'तुम मेरा कहा नहीं मानोगी ?"

"विवश हूं।"

"फिर जाओ।"

बीना तुरन्त चली गई। विमला ने उसे रोका देखो बीना मैं आजकल अकेली हूं। सेठजी की अनुपस्थिति के कारण मामले की तारीख भी निश्चित नहीं है। इस बीच यदि तुम मेरे साथ रहो तो ।

बीना ने सजल नेत्रों से उसकी ओर देखकर कहा "मैं यहां नहीं रह सकती। मैं एक अस्थिर मस्तिष्क की औरत हूं। सरजू बाबू के शहर में रहकर न कहीं फिसल न जाऊं। मुझे लगता है कि सरजू बाबू सम्मोहन का मंत्र जानते हैं। सम्मोहन का मंत्र — नहीं तो भला कोई आदमी मुझे स्पष्ट शब्दों में यह कैसे कह सकता है कि मैं तुमसे विवाह करूंगा। मैं उस कहने वाले का मुंह न नोच लूं ! पर मैं किन

प्रतिदिन दुर्बल होती जा रही हूं। विमला! मेरा सम्मोह छोड़ दो।"

इस बार विमला सहमा पड़ी "तुम्हें अपने पर भरोसा नहीं फिर जिन्दा कैसे रहोगी? क्या वहाँ और सरजू बाबू जैसे आदमी नहीं मिलेंगे? जो खतरा यहाँ है वह खतरा वहां भी हो सकता है?

"लेकिन वहां खतरे की संभावना है और यहां खतरा प्रत्यक्ष है। जो प्रत्यक्ष है, सबसे पहले उससे बचना चाहिए।"

"मतलब यह है कि तुम्हारा इरादा पक्का है?"

"यही समझ लो।"

"फिर जाओ हालांकि तुम मेरा कहना मान रही हो फिर भी मैं तुम्हें विश्वास देती हूं कि जब किसी आपत्ति व विपत्ति में हो मुझे जरूर लिखना। मैं तुम्हें जरूर सहायता दूंगी।"

वीणा ने कठोर होकर कहा "ईश्वर मुझे इतनी दुर्बल न बनाए।"

"कामना मेरी भी ऐसी है।

वीणा ने जाते हुए एक बार कहा "मैं तुम्हें कभी नहीं भूलूंगी। मैं संघर्ष से डर गई। मैंने अपने बच्चों तक को छोड़ दिया। अपना सारा धन दे दिया पर तुमने विद्रोह का झंडा खड़ा कर दिया है। देखूंगी परिणाम क्या निकलता है।"

विमला कुछ नहीं बोली। वह वीणा को मर्मभरी दृष्टि से देखती रही। वीणा तरस भरी हंसी हंसकर बोली "उस समय हम कितने आश्चर्य में पड़ जाते हैं जब हम देखते हैं कि कोई युवती कल बड़ी जिद्दी थी और आज उसका हठ जरा भी घटकर टिका हुआ नहीं है। लेकिन हम भी भूल जाते हैं कि कल की परिस्थिति में और आज की परिस्थिति में कितना अन्तर है। नमस्कार!"

वीणा चली गई।

विमला के नैन भर आए।

देवता बन गए

मनुष्य का जीवन आकाश के उपग्रह की भांति एक निश्चित दायरे पर घूमता रहता है। संघर्ष विकर्षण सुख-दुःख जीवन-मृत्यु विधि-विधान के ये दृश्य और उससे उपलब्ध प्रतिक्रियाएं एवं उपलक्षण हमें स्वाधीन और पराधीन कई समस्याओं में जकड़ देते हैं। कुणाल अपने बाप का विद्रोह करके अपनी जन्मभूमि को त्याग करके दक्षिण के दूरस्थ प्रांत मद्रास में जाकर बस गया था जहां वह सोने-चांदी की दलाली करता था। उसका जीवन सुखमय था।

कुणाल का बाप वर्जित संभावनाओं को दृष्टि-ओझल करके अपने घर नई दुल्हिन लाया। बाप के इस दुष्कृत्य को बेटा सहन नहीं कर सका। नए युग के बेटे जो हर अपात्तिजनक रूढ़ि के विरुद्ध क्रान्ति का आह्वान करना चाहते थे उन बापों का सख्त विरोध करने लगे जो पूंजी के बदौलत नारी को एक गुलाम की भांति खरीद कर ले आते हैं।

कुणाल ने अपने बाप का विरोध किया।

तब सरजू ने ऋषि-मुनि की भांति गम्भीर होकर कहा था 'प्रियदर्शी अशोक ने जब तिष्यरक्षिता से विवाह किया तब उसके बेटे कुणाल ने कोई विरोध-अवरोध खड़ा नहीं किया था। और तुम !

कुणाल ने हंसकर कहा था 'युग के साथ परम्पराएं व मान्यताएं बदल जाती हैं। प्रियदर्शी की इस भूल के कारण उन्हें अपने पुत्र की दुर्दशा देखनी पड़ी। उस कुणाल ने माँ की आज्ञा पर आंखें भी निकाल कर दे दी थीं। यह महात्याग उस युग का पुत्र ही कर सकता है। मुझमें वह हिम्मत नहीं। मैं हूं तब तक यह विवाह नहीं होने दूंगा। पिता जी की आयु ५० के लगभग हो रही है। वंश के लिए मैं मौजूद हूं फिर यह दुष्कृत्य क्यों ? मेरे घर जो युवती माँ बनकर आएगी और वह भटककर अपने पुत्र अर्थात् मुझ पर बुरी दृष्टि रखगी उसे क्या मैं सहन कर सकूंगा ? नहीं मुझमें वह हिम्मत नहीं है। भावना का यह व्यभिचार समाज के लिए ही नहीं आत्मा के लिए भी बड़ा ही निम्नकोटि का होता है। समाज ऐसी पापी आत्माओं को जन्म-जन्मांतर क्षमा नहीं करता है।"

सरजू ने भी विहँस कर कहा "तुम्हें शायद यह पता नहीं है कि आदमी कभी भी बूढ़ा नहीं होता। वह सदा युवक सदा पौरुषमय और सदा शक्तिशाली रहता है।"

उसके इस बेतुके कथन पर कृपाल चिढ़ गया। नेत्रों में हल्की चिनगारी लाकर बोला "वनगमनप्राप्ति का युग बीत गया है वकील साहब और न ही अब भी कुमार वैसे दब बैठे ही रहे हैं। उसने अपनी दृष्टि दूसरी ओर घुमा ली "यदि आप अच्छी तरह नहीं मानेंगे तो मैं समाज की उन सुधारवादी संस्थाओं के किवाड़ खट-खटा ऊँगा जो सामाजिक भ्रष्टाचार का विरोध करते हैं। बाप और बेटे के इस संघर्ष में घर की इज्जत पर अवश्य धूल पड़ जाएगी।

"जब तुम इसके लिए तत्पर ही हो गए हो तब किया क्या जाए? लेकिन मैं यह समझता हूँ कि यह विरोध तुम्हारे हित में घातक ही रहेगा। इस अतुल सम्पत्ति से हाथ धोना पड़ेगा।"

"मुझे सम्पत्ति नहीं अपना जीवन चाहिए।

"जीवन!" वकील सरजू चौंक पड़ा।

कृपाल ने कोई उत्तर नहीं दिया।

भीषण विरोध के बावजूद भी सरजू के मित्र गोकुलप्रसाद का विवाह उसी रात चुपके से समीप के गाँव में बड़े ही रहस्यमय ढंग से सम्पन्न हो गया। अपनी इस पराजय के बाद कृपाल का उस शहर में रहना अत्यन्त दूभर व हास्यास्पद-सा हो गया अतः वह अपनी सौतेली माँ विमला को बिना देखे ही मद्रास में जाकर बस गया।

पहली रात विमला ने दुल्हिन बनकर गोकुल की भव्य अट्टालिका में प्रवेश किया। अतुल वैभव के बीच अपने आपको पाकर विमला ने अपने भाग्य की सराहना की और मन में अभिमान का अनुभव भी किया। यह उसे पहले ही मालूम था कि किन्हीं विकट कारणों से उसके बाप को यह सौदा करना पड़ा है।

विमला धैर्यपूर्वक अपना जीवनयापन करने लगी। पति की यह दुर्बलता कि वे पौरुषहीन हैं उसे अधिक पीड़ाजनक नहीं लगी। पति के एक नौकर से उसकी उतनी ही घनिष्ठ आत्मीयता एवं स्नेह सम्बन्ध था जितना मीठाराम और क्रमशः लगा

था। दोनों एक दूसरे की पीड़ा पहचानते थे, दुःख बटाते थे और कभी-कभी विगत जीवन को स्मरण करके अश्रु बहा लिया करते थे।

नौकर का नाम 'बद्री' था। और युवकों की अपेक्षा गम्भीर मौनव्रत रखने वाला सीधा-सादा। न किसी से मित्रता बढ़ाता था और न किसी से दुश्मनी साधता था। सभी के मन में हवेली के उस दयनीय पात्र के प्रति करुणा रहती थी। सभी सबके मन में यह उत्सुकता रहती थी कि वह हमारा मित्र बने।

हां कभी-कभी बूढ़ा रसोइया महाराज उससे खाना खिलाते समय कुछ प्रश्न पूछ ही लिया करता था "तुम जाति के कौन हो?

वह उत्तर देता "ब्राह्मण हूं महाराज!"

महाराज उसे अपनी जाति का समझकर उसके खाने की चीजों में भेद नहीं रखता था। उसे शुद्ध घी तथा सब्जी के लिए कभी विशेष मिठाइयां परोसता था। अब क्या दूध रात को उसे पिलाता हुआ पूछता 'तुम्हारा घर कहां है?"

वह दूध पीता हुआ कहता "घर नहीं है।"

कहां के रहनेवाले हो?"

"मथुरा का घर-बार सब बेच आया हूं। मां-बाप मर गए। मेरा इस संसार में अब कोई नहीं है महाराज।"

"और बहू?" महाराज की आंखें प्रसन्नता से नाच उठीं। अपने सिर को बुजुर्ग की भांति हिलाकर मुदित स्वर में कहता "इस बड़ी उम्र में हमारे देश में कोई कुंवारा नहीं रहता। अरे बेटा यह मारवाड़ है जहां का बाप के बच्चे बच्चियों को भी ब्याह दिया जाता है।

वह संतप्त स्वर में उत्तर देता 'और तुम्हारे ही मारवाड़ में आदमी दरिद्रता और कलंक का अभिशाप लिए हर क्षण बहू के पावों की पैंजनियों की आहट सुनने को आतुर रहता है। और जब मरता है तब उसकी स्मृति में 'भाखर' (श्मशान भूमि पर एक छोटा मढ़ा कुंवारे आदमियों की स्मृति में राजस्थान की कई जातियों में बना दिया जाता है) बना दिया जाता है। और उनकी अतृप्त आत्माएं हमारे बीच देवता बनकर या भटकी होती हैं।

"लेकिन तुम कुंवारे नहीं रह सकते। पढ़े-लिखे हो। नौकरी भी करते

चेहरे से अच्छे खानदान के भी लगते हो फिर यह विश्वास नहीं होता कि तुम्हारी शादी नहीं हुई।"

"कोई किसी को न तो विश्वास दे सकता है और न विश्वास ले सकता है। महाराज! यह अविश्वास ही आज हमारे मन की सजगता बना हुआ है। हम सोचते हैं कि इस युग में सत्य का दर्शन दुर्लभ है। फिर कैसे पर-पुरुष पर विश्वास करें।

महाराज इसका अर्थ नहीं जानता था।

वह मुस्कराकर कहता "माफ करना बेटा बात पूछने की आदत जो ठहरी। तर्क-वितर्क में मुझे बड़ा आनन्द आता है।

विमला को भी उसने यही उत्तर दिया था "मेरी चुप रहने की आदत मेरी आज की नहीं बहुत पुरानी है। बचपन में ही मैं सदा एकांत आत्मनिवेदन में आनन्द लिया करता था। अब वह एकांत आत्मनिवेदन अधिक हो गया है जिससे लोगों को मेरे चरित्र के बारे में संशय होने लगा है।"

विमला चहक कर कहती "यह एकांत का आत्मनिवेदन क्या इस बात का द्योतक नहीं कि तुम अपने आपसे किसी जटिल समस्या पर गम्भीर मन्थन करते रहते हो?

"वैसे तो मानव जीवन ही समस्याओं से परिपूर्ण है। इसे भी मैं समस्या का एक चक्कर मानता हूं कि मैं तुम्हारे यहां साग-सब्जी लाने वाला एक तुच्छ नौकर हूं।"

"तुच्छ नौकर हो या सम्मानित यह मैं अच्छी तरह जानती हूं। कदाचित् इस घर में एक तुम्हीं ऐसे व्यक्ति हो जिसे सच का सामना कहा जा सकता है।"

"यह भी मेरा दुर्भाग्य है कि मैं जिस परम सुख की खोज में हूं वह उतना ही मुझसे अगम अगोचर बनता जा रहा है। क्यों मुझे सुख मिलता है जब कि मैं सुख की अभिलाषा भी नहीं चाहता।

विमला बाहर के अन्तर की गहरी व्यथा को समझ गई। इस उम्र में दुख को चिर कामना करने वाला प्राणी कितना दुखी हो सकता है इसे वाणी द्वारा व्यक्त नहीं किया जा सकता।

तब विमला ब्रह्म के दुःख में स्वयं आत्मसात् हो जाती थी। उसके मन की वासना का देवता तब दुर्वासा के क्रोध-सा प्रचंड हो जाता था। वह पीड़ा में तिल मिला उठती थी। तब उसे अपने हृदय में उस अनंत-अथाह शून्यता का भान होता था जो स्वयं शून्यता की संज्ञा लेकर अपने में महाप्रलय-कम्प निहित रखती थी।

दोनों एक दूसरे के मन को समझने में प्रयत्नशील थे।

धीरे-धीरे अतीत का आवरण हटता गया।

"ब्रह्म ने बताया दीदी जब पुरुष को पौरुषजनित पराजय मिलती है तब वह महा ग्लानि से अपने आपको मृत समान समझ लेता है। कौन सुखद जीवन नहीं चाहता ? लेकिन चाहने भर से क्या सब कुछ मिल सकता है। मैंने तो देखा है कि आदमी जिस ओर प्रयत्नशील होता है, वह मंजिल उससे उतनी ही विपरीत होती जाती है।"

इसके बाद ब्रह्म ने अपने विगत जीवन के समस्त विस्मृत क्षणों की चर्चा कर डाली। उसने जो कुछ बताया वह इस प्रकार था

उसका विवाह उच्च कुल की कन्या को देखकर ही किया गया था। ब्राह्मण कुल में जन्म लेने पर उसे ममता का छोड़ना पड़ा क्योंकि वह कायस्थ थी। ब्राह्मण कायस्थों को अपनी सन्तान कहकर अपमानित किया करते हैं। इसमें ब्राह्मण अपना गौरव समझते हैं। लेकिन कायस्थ इसे किसी भी रूप में स्वीकार करने को तैयार नहीं। आज का युग प्रजातांत्रिक ठहरा। जाति-भेद को लेकर सोचना-विचारना या अपने से किसी भी प्राणी को हीन समझना उसका प्रत्यक्ष अपमान करना है। ब्रह्म के बाप ने ब्रह्म की शादी अपने ही जैसे कुलीन ब्राह्मण के घर की। ब्रह्म का प्रणयगत संगम झगड़ा के सम्बन्ध-विच्छेद के साथ अमगल बन गया।

ममता का बाप भी सम्मान देखकर अपनी बेटी का गले को भी ब्याहना नहीं चाहता था। उसने भी स्पष्ट कह दिया कि वह अपनी बेटी को विष दे देगा।

ब्रह्म की शादी मीनू से हो गई।

मीनू साधारण युवती थी। परिश्रम द्वारा वह गृहस्थ की नायिका बनी हुई थी। कठोर श्रम करके उसने समस्त घर की सद्भावनाओं को ग्रहण कर लिया था।

होती है। मैं तुमसे सुखी मन से विमुख नहीं हो रहा हूं। यह मेरी दुर्बलता और हीनता है। कैसे कोई पति दुश्चरित्र स्त्री के साथ रह सकता है यह मेरी हृदय की कल्पना से परे है। कभी-कभी मैं आत्महत्या करने की भी सोच लेता हूं लेकिन एक मुराद है कि तुम्हारे इस भ्रम का परिणाम देखूं ?

"एक बार फिर तुम्हें अपने हृदय से बददुआएं दे रहा हूं कि तुमने मुझे कहीं का नहीं रखा। अब कहीं मुंह छुपाकर पड़ा रहूंगा।

—बाबू"

इस रहस्य से परिचित हो जाने के बाद विमला उसके निकट आती गई। दो पीड़ाएं मिलकर एक नवीन सुख का संचरण करने लगीं।

एक दिन विमला ने अनुराग पूर्ण स्वर में पूछा "आजकल मीनू का क्या हाल-चाल है ? यह एकांत पीड़ा बहुत पहले से ही हो रही है ? मैं समझती हूं कि अब तक कोई न कोई परिणाम निकल ही गया होगा ?

बाबू कुछ देर तक गुमसुम बैठा रहा।

"चुप क्यों हो ?" विमला ने दुबारा पूछा।

"तुम यह न पूछो तो अच्छा रहेगा।"

"क्यों ? जिस परिणाम से परिचित होने के लिए तुमने जीवन से मोह बनाए रखा क्या उस परिणाम से अपनी दीदी को परिचित नहीं कराओगे ?"

बाबू कुछ देर तक खिड़की की राह स्वच्छ आकाश को निहारता रहा। उसकी आंखों में दुःख के बादल उमड़ आए। कंठ-स्वर अवरुद्ध हो गया। नैनों को झुकाकर कहने लगा "जिस दुर्दान्त भविष्य की मैं शुभकामना करता था फल उसके विपरीत ही निकला। दीदी जिस एकाग्रता से मैंने असीम सत्ता की प्रार्थना की, उससे तो मीनू का रोम-रोम भस्म हो जाना चाहिए था। मेरी हर सांस वर्षों से उसके विनाश की याचना है। पर मीनू आज चेतन के साथ बहुत सुखी और आनंदित है। वह दो बच्चों की मां है। एक लड़का और एक लड़की। एक बार मैं अपने 'परिणाम' से अवगत होने के लिए गया भी था पर वहां दो नन्हें-मुन्नें बच्चों को देखकर मेरे मन का पाप कपूर बन गया। मैं उन बच्चों के प्रति जरा भी क्रूर नहीं बन सका। वे निर्दोष फूल-से कोमल और कलियों-से चहकते बच्चे! सच कहता हूं दीदी,

यह विचार मेरे मस्तिष्क में हठात् मा गया कि काश ये बच्चे मेरे अपने होते ? तभी मीनू की आवाज सुनाई पड़ी। बच्चे भागकर भीतर चले गए। उस दिन से मब मैं उन बच्चों के लिए मीनू की भी शुभकामना करने लगा हूं। अब उसके अहित के साथ उन दो मासूम बच्चों का भी अहित है। प्रार्थनाएं बदल गईं, मन के क्रूर रवों पर पर्दे पड़ गए। आदमी भी क्या खूब है? धीरे-धीरे सबसे समझौता करते चलता है। बस अब यहीं इसी छोटी हवेली में विगत जीवन की कटु स्मृतियों को छिपाकर मर जाऊंगा।

ब्रह्म की ज्योंही दृष्टि उठी उसने देखा कि विमला अपने मुंह को आंचल में छुपाकर रो रही है।

पापी मनुष्य अपने विचारों की प्रतिच्छाया दूसरों में भी देखता है। वह औरों की अपेक्षा अधिक निष्ठुर होता है।

सेठ गोकुलप्रसाद सोन्कर कई दिन तक विमला और ब्रह्म की गहरी दोस्ती को देखते रहे और मन ही मन पीड़ाजनक बातें सोचकर अपने आपको संताप पहुंचाते रहे। लेकिन जब विमला रात के पहर उनके शय्या-गृह में आने में देर-अबेर करने लगी तब सेठ गोकुल ने ब्रह्म का पत्ता ही काट दिया।

ब्रह्म की आंखें भर आईं। वह विगलित स्वर में बोला "सेठ जी बीते वर्षों में भी मैं आपसे व्यर्थ की तनख्वाह ले रहा था। मैं आपका एक अनावश्यक नौकर हूं। केवल रोटी-कपड़े पर रहता आया हूं अब आप मुझे यहां से क्यों निकालते हैं ?

सेठ गोकुल गहरी संवेदना के साथ बोले "नहीं नहीं यह बात नहीं है, कुमार के जाने के बाद मेरे व्यापार में बहुत घाटा लग गया है और दिन प्रतिदिन लग रहा है। मैंने वर्षों तुम्हारा बोझ उठाया अब उठाने में एकदम असमर्थ हूं।"

"मैं पढ़ा लिखा भी हूं। आपकी दुकान के बहीखाते भी सभाल सकता हूं।

'बात यह है कि मैं तुम्हें अपनी सम्बन्धी बातें नहीं बता सकता कुछ ऐसी विवशताएं हैं जिनके कारण अब तुम्हारा यहां रहना सम्भव नहीं हो सकता।"

सेठ का रूखा उत्तर पाकर वह रो पड़ा। अपनी अंगुलियों से दुखते

पोंछकर बोला "जैसी आपकी मर्जी कल ही चला जाऊंगा।"

विमला गृहस्थ के कार्य से निवृत्त होकर हिन्दी का मासिक पत्र 'सुनीचर' पढ़ रही थी। कोई व्यंग्यात्मक कहानी थी। पढ़ते-पढ़ते कभी-कभी उसके होंठों पर हंसी भी नाच उठती थी।

तभी हाथ में पोटली लिए 'बद्दू' आया। उसका उदास मुख देखकर वह बोली "क्या बात है बद्दू? यह गठरी लेकर कहां चले?"

"बाहर जा रहा हूं।"

"क्या सेठजी किसी काम के लिए तुम्हें भेज रहे हैं?"

"नहीं तो?"

"क्या फिर 'परिणाम' से परिचित होने जा रहे हो? मेरे ख्याल से इस बार मीनू तीन बच्चों की मां बनी हुई मिलेगी।" उसके शब्दों में व्यंग्य स्पष्ट झलक रहा था। बद्दू की आंखों में आंसू आ गए।

"अरे, तुम रोने क्यों लगे?" विमला 'सुनीचर' को रखकर एकदम उठी। वह उसके सन्निकट आ गई। उसका हाथ पकड़कर बोली "बात क्या है? बोलते क्यों नहीं?"

"   ।" बद्दू इस बार भी चुप रहा। केवल उसके आंसू बहते रहे।

विमला की आंखें सजल हो उठीं। स्नेहसिक्त स्वर में बोली "अत्यन्त असंगत है यदि अपनी दीदी को परिचित नहीं कराओगे तब किसे कराओगे। इस संसार में तुम्हीं बताओ कि मेरे सिवाय कौन है तुम्हारा? मैं और तुम दोनों भाग्य के सताए, विधि के दुत्कारे हुए हैं। अब दुःख ही हम एक दूसरे का सम्बल हो सकता है।"

बद्दू फफक पड़ा "मैं सदा-सदा के लिए जा रहा हूं दीदी सेठजी के पास अब मेरे लिए कोई काम नहीं रह गया है।"

एक अनहोनी चोट से जो कसक दिल में आ जाती है वही कसक विमला में आ गई। कुछ देर चुप रहकर वह बोली "क्यों क्या उनका दिवाला पिट रहा है जो तुम्हारे लिए जगह नहीं है!"

"एकदम गर्म होने की कोई जरूरत नहीं है, दीदी! मैं नौकर हूं। मुझे जाना

ही पड़ेगा।

"तुम नहीं आ सकते !

तो क्या तुम मेरे लिए अपने पति से विरोध करोगी ? नहीं, ऐसा करना सर्वथा अनुचित है। मर्यादाहीन कार्य हम दोनों के सम्बन्धों में पाप को स्थापित कर देंगे। बीबी तुम्हें मेरी कसम है कि मुझे लेकर तुमने सेठ जी को एक शब्द भी कहा तो। मैं नहीं चाहता कि जाते समय मेरे सम्मान पर कोई आंच आए। इन छोटे-मोटे नौकरों का जो स्नेह और ममता मुझे वर्षों से मिलती आ रही है उसमें घृणा की रेखा भी देखना मुझे स्वीकार नहीं।"

"तुम इन साधारण बातों के सम्मोह में उस विशेष रहस्य को क्यों विस्मृत कर देते हो जो सेठ जी के मन में छुपा हुआ है ? बात यह है कि जो पुरुष नारी को प्रेम नहीं दे सकते वे संशय के शिकार हो जाते हैं तथा वे इस प्रयास में लगे रहते हैं कि नारी उनकी सावधानियों से परिवेष्टित रहे। पर क्या इससे समस्या का समाधान थोड़े हो ही जाता है ? विमला का स्वर कठोर था।

बाबू के नेत्र विस्फारित हो गए। बोला 'तो क्या सेठजी मेरे और तुम्हारे बीच पाप के दर्शन करते हैं ?"

विमला की आंखों में व्यथा तैर आई। भावना के प्रवाह में उसका स्वर टूट गया "यही बात है बाबू जो पुरुष नारी को संतोष और सुख देने से शक्तिहीन हो जाते हैं उन्हें अन्य पुरुषों से घृणा हो जाती है। वे चाहते हैं उनकी औरतें केवल उनके अर्थहीन प्रणय-लीलाओं से संतोष कर ले। वे चाहते हैं कि वह स्त्री जो किसी परवशता से उनकी दुल्हिन बनकर आ गई है, वह जीते जी अपनी लालसाओं तथा वासनाओं का दाह-संस्कार कर ले। लेकिन प्रकृति भी अपने अंक में कितनी ही मधुर प्रवृत्तियां छिपाए हुए है। वे नारी को निर्मम नहीं रहने देतीं। वह अपने संतोष का रास्ता किसी भी तरह ढूंढ ही लेती है। मैंने भी अपना नया मार्ग अपनाया। सोच लिया कि मैं विधवा ही हूं। पर क्या मुझे भगवान स्वरूप पुरुष को सर्वस्व मानकर मन की बात कहने का अधिकार नहीं ? उस निष्प्राण मूर्ति की अर्चन अर्चना करके औरतें जीवन भर एक अप्राप्य सुख का आनंद ले सकती है, क्या यहां मैं सप्राण देवता के समक्ष अपनी पीड़ाओं के प्रकटीकरण से क्षणिक आनंद

नहीं ले सकती ? परकीया प्रेम गोपियों की संवेदनाएं राधा की आन्तरिक भाव धारा जनित मुखरता का स्वच्छंद उपभोक्ता श्रीकृष्ण महासमर्पण का अधिकारी बनकर भी नारी की चारित्रिक पावनता का उद्घोष कर सकता है, वहां मुझे उस पुरुष को संसर्ग का सुख क्यों नहीं उठाने दिया जाता है जिसने स्वकीया पत्नी को इसलिए त्याग दिया कि वह चरित्रहीन थी। विमला की आंखें भर आईं। अपनी आंखों को पोंछकर वह दो मिनट के बाद बोली 'बद्र ! यह भीषण सामाजिक विडम्बना है कि जीवित मनुष्य को अब देवता की संज्ञा नहीं दी जाती नहीं तो मैं तुम्हें समाज के समक्ष खड़ा करके कहती कि उन पाषाण खंडों की पूजा को छोड़कर इसे पूजो क्योंकि इसका मन अनेक आघातों से तपकर स्वर्ण की भांति निष्कलंक हो गया है। प्रार्थना की भांति पवित्र हो गया है। "मैं चुप नहीं बैठूंगी बद्र ! यह अपमान की चरम सीमा है। यह मेरे निष्कलंक चरित्र पर खुला लांछन है। इसे मैं नहीं सह सकती। यह सब मेरे लिए असह्य है।"

बद्र ने अविनीत स्वर में बोला "मेरा देवत्व तुम्हारे विद्रोह में सन्निहित नहीं है तुम्हारी शांति और धैर्य में है। बस मुझे आशीर्वाद सहित विदा कर दो कि मेरा यह देवत्व सदा कायम रहे हालांकि मैं इसे देवत्व नहीं मनुष्यमात्र की दुर्बलता ही कहूंगा।

"नहीं।"

"फिर मैं ऐसे ही चला जाऊंगा। लेकिन अन्तिम बार मैं सुखित मन जाना चाहता हूं। दीदी विद्रोह नारी का धर्म है, यदि उसमें निम्न वासनाओं का आधिपत्य न हो तो ? सच्चा विद्रोह वही है जिसमें शुद्ध संघर्ष का आह्वान हो।"

विमला नेत्र उठाती इसके पूर्व ही बद्र उसकी दृष्टि से दूर हो गया।

नई तिष्यरक्षिता

दूसरे दिन सवेरे सेठ जी को विमला का मधुर कंठ-स्वर से प्रस्फुटित मीरां का गीत सुनाई नहीं पड़ा। वे व्यग्र हो उठे। उन्होंने विमला के कमरे में जाकर देखा—दिन के सात बज रहे हैं और विमला बिस्तरे पर क्यों सो रही है?

मधुर स्वर में पुकारा "सुनो आज तुम सोई हुई क्यों हो? क्या आज पूजा पाठ नहीं करना है।

"नहीं।'

"क्यों?

'मेरी मर्जी। अब इस पाठ-पूजा और भाव-भक्ति से मेरा मन भर गया। विश्वास करते-करते विश्वास की आस्था ही टूट गई।"

सेठ जी ने घोर परिवर्तन विमला के चेहरे पर देखा। जो स्नेह सौजन्यता एवं सविनयता झलकती थी वे सब निर्जीव निर्ममता में परिवर्तित हो गए। शंकित होकर बोले "बात क्या है?

"कुछ नहीं।"

"कुछ तो जरूर है।

"सुनना चाहते है।"

" ।" सेठ जी चुप रहे।

"फिर सुनिए, कल से पहले मैं आपको एक दोषहीन देवता समझती थी। मैं इतना ही जानती थी कि स्त्री के प्रति घोर आसक्ति के कारण आपने मुझसे विवाह किया। मैंने इसे विधि-विडम्बना समझकर संतोष कर लिया लेकिन कल वहां के जाने पर मैं यह महसूस करने लगी कि आप मुझे मर्यादा के भीतर भी सुखी रहने देना नहीं चाहते हैं। आपमें वही स्पर्धा है जो एक सम्पूर्ण पुरुष में होती है।"

सेठ जी बीच में ही बोल पड़े तूफान का अंदेशा देखकर मनुष्य को सावधान हो जाना चाहिए। यह वहां बड़ा ही रहस्यपूर्ण व्यक्ति है। क्या पता कभी वह तुम्हें लेकर ।"

विमला ने प्रश्नरोध पैदा किया "जो चरित्रहीन स्त्री के कारण दुःख भोग चुका

है, वह किसी को चरित्रहीन नहीं बना सकता। एक चरित्रहीन स्त्री के प्रति उ
मन में बड़ी घृणा है। उस घृणा के कारण उसके मन में चरित्रहीन स्त्री का
स्थान भी नहीं पा सकती।)

"फिर भी मनुष्य को सावधान ।"

"सावधान का मतलब ?"

"मैं बहुत इज्जतदार रईस हूं। मेरी पत्नी कभी नहीं समझती चाहिए। इ
दिन मैंने तुम्हें जो स्वतन्त्रता दी उसका दुरुपयोग करके मेरे विश्वास को जा
सरयू साहब का कहना है कि वह के साथ ।

सरयू साहब वकील हैं। वकीलों के मन में यह सिद्धान्त घर किए रहता
कि जो झूठ कहता है वह बढ़कर सत्य बोलता है और जो सत्य बोलता है वह
झूठा है।"

"इसका मतलब यह है कि तुम ही सतवंती सीता हो।"

"सीता के मन का मर्म सीता ही जान सकती है। फिर भी मैं सीता की
अग्नि-परीक्षा नहीं दे सकती। क्योंकि आज की अग्नि का काम केवल सजीव
भस्म करना है।"

"अग्नि-परीक्षा के लिए तन और मन दोनों की पवित्रता चाहिए।"

"तन की पवित्रता तो उनके बच्चों से मालूम हो ही जाएगी और मन
पवित्रता के लिए इतना ही काफी है कि मैंने आपको आजतक नहीं छोड़ा। मैं आप
एक आदर्श पत्नी बनकर रही।

सेठ जी चुप हो गए। उनका चेहरा रोगी की तरह पीला पड़ गया। बिमला
उनके उत्तर की प्रतीक्षा किए बिना ही बाहर चली गई।

इस घटना के बाद बिमला धीरे-धीरे बदलती रही। अब वह नित्य न
साड़ियां पहनकर बाहर जाने लगी। उसकी सखियों की संख्या दिन प्रतिदिन
चक्रिकाओं की भांति बढ़ने लगी।

मीना का कोई पत्र इन दिनों नहीं आया था फिर भी उसकी स्मृति बिमला
को बरा-बरा आ ही जाती थी।

एक दिन उसके घर पार्टी थी। उसकी सखियों के पतियों का आग्रह था कि

वह एक दिन हम सबको अपने घर बुलाकर खिलाए-पिलाए ।

भिन्न-भिन्न स्वभाव की स्त्रियों के बीच विमला दर्पिता नारी की भाँति घूम रही थी । अपार सम्पत्ति का दम्भ उसके चेहरे पर झलक रहा था । भोजन कर चुकने के बाद कुछ पुरुषों ने विमला से उसके पति के बारे में कई प्रश्न किए । उसने उखड़े स्वभाव से उत्तर दे दिया । अचानक सरजू के मित्र डाक्टर बोस ने पूछा "फिर आपके पति आए क्यों नहीं ?"

विमला ने सटाक उत्तर दिया "यह उनकी मर्जी ।"

"यह मर्जी शिष्टता के विरुद्ध है ।"

बात यह है डाक्टर बोस हम एक दूसरे के व्यक्तिगत मामलों में जरा भी दिलचस्पी नहीं लेते ।

"यह व्यक्तिगत स्वतंत्रता अनुकरणीय है ।" बोस ने कंधे मचकाकर उत्तर दिया ।

तभी सरजू आ गया । उनकी मण्डली में अपने बैठने के लिए कुर्सी खिसकाकर बोला "देखो बोस, व्यक्तिगत स्वतन्त्रता का आदर तो दो बराबर वालों में पाता है । दीया और सूरज का मुकाबला कुछ जंचता नहीं । बात यह है जोड़ा बूढ़ा है उस साथ तमाम अच्छी नहीं लगती ।"

विमला ने तीखी दृष्टि से सरजू को देखा । सरजू अपनी आदत के अनुसार अपने पाँवों को यंत्र की भाँति हिलाने लगा ।

बोस बात के रुख को जान गया । आँखें फाड़कर बोला "बाबा रे बाबा ! यह बड़ा घटिया किस्म का मजाक है । जाने दो । पर कोई बात नहीं जरूर तुम आज पिए हुए हो ।"

सरजू उठकर एक ओर चला गया । मिसेज शर्मा के कन्धों पर हाथ रखकर बोला "अब आप मुझे अपने घर कब बुला रही हैं ?

मिसेज शर्मा काफी चुस्त और चतुर युवती थी । सरजू के हाथ को बड़ी नाज़ुकीयता से हटाती हुई बोली "उनसे यह प्रश्न करना कितना अनुचित है जिन्होंने अभ्यागत को सदा के लिए निमन्त्रण दे रखा हो ।"

"लेकिन मुझे भूल जाने की आदत है ।"

मिसेज शर्मा व्यंग के साथ मुस्कराकर बोली "फिर तो आपको किसी अच्छे

कथा में होंगे।

बिमला ने इसका उत्तर ठंडी श्वास के अतिरिक्त कुछ नहीं दिया। संस्कारों से आक्रांत भावनात्मक मन का उद्वेलन बिमला को एक नूतन-विचित्र स्थिति में छोड़ देता था। उस विचित्र स्थिति में वह मंझधार में भटकी तरणी की तरह अवलम्बनहीन होकर रह जाती थी। अतीत की पीड़ा और भविष्य का तिमिर उसकी उस कामना का सहभागी करते थे जो कामना अपने स्वतंत्र अस्तित्व का आह्वान किया करती है।

सेठजी से उसका एकांत देखा नहीं गया। उन्हें खतरा होने लगा कि कहीं बिमला पागल न हो जाए अतः वे बिमला के चारों ओर इस तरह मंडराने लगे जिस तरह कोई उन्मादग्रस्त व्यक्ति के चारों ओर घूमता है। बिमला का क्रोध इससे और भड़क गया।

एक दिन वह तमक कर बोली "आप मेरे पीछे-पीछे क्यों लगे रहते हैं?"

"आजकल तुम्हारी तबीयत ठीक नहीं है।"

"नहीं है तो मुझे मर जाने दो। मुझे किसी की भी सहानुभूति की आवश्यकता नहीं।"

"क्यों? मैं तुम्हारा पति हूं यदि मैं तुम्हारी चिंता नहीं करूंगा तो कौन करेगा?"

"देखिए सेठजी एक तो आप ऐसे ही दुर्बल हैं फिर यदि आप मेरी चिंता करेंगे तो आपके हक में अच्छा नहीं रहेगा।"

सेठ जी का चेहरा उतर गया।

"कुमार की कोई चिट्ठी नहीं आती?"

"नहीं उसने एक बार लिखा था आप यह सोच लें कि आपका बेटा कुमार मर गया।"

तभी माधुरी का भाई महेश आ गया। उसके आते ही बात का सिलसिला ही बदल गया। बिमला तुरन्त बन-संवरकर बाहर चली गई।

जब वह लौटी तब सेठजी उसी कमरे में बेचैनी से टहल रहे थे। बिमला को देखते ही वह बोले "कहां गई थी?"

"घूमने ।"

"मुझे छोड़कर ?"

"क्या करती ?"

"मैं भी तुम्हारे साथ चल सकता था ।

"आज आपके दिमाग में यह नया विचार एकाएक पैदा क्यों हो गया ?"

"सिर्फ इसलिए कि घर की इज्जत बाहर जाकर कालिख न लगा ले । सरजू बाबू ठीक कहते थे कि आप विमला पर कन्ट्रोल कीजिए अन्यथा आपकी इज्जत... ।"

विमला बीच में ही बोली "यह सरजू बाबू भी आजकल रहस्यमय बनते जा रहे हैं । मुझसे प्रणय-निवेदन में चातुर्य का प्रयोग करते हैं और आपको इज्जत के प्रति उभारते हैं । आप सरजू बाबू को कहिए कि कोई अच्छी-सी लड़की देखकर ब्याह कर लीजिए । यह बीवी की स्मृति की आत्मवंचना आवश्यकता से अधिक खोखली हो चुकी है ।"

"तुम्हें सरजू बाबू कैसे लगते हैं ?"

"मुझे ? क्यों ?

"यूं ही पूछता हूं आखिर हमारे वकील हैं ।"

"मैंने इस दृष्टिकोण से उन्हें देखने-परखने का प्रयास नहीं किया वैसे आजकल मैं उन्हें घटिया चरित्रहीन और झूठा समझती हूं । बीना को इन्होंने ही विवाह का प्रस्ताव करके भगा दिया । बेचारी न जाने आजकल कहां होगी ?"

इसके बाद सेठजी और विमला के बातों की कटुता बढ़ती गई । बातचीत की गर्मागर्मी में विमला ने सेठजी के अधिकारपूर्ण वाक्यांश—मैं तुम्हारा पति हूं—का इतना कठोर उत्तर दिया कि सेठ जी को चुप रहना पड़ा । वह बोली "मैं आपकी पत्नी नहीं हूं और न आप मेरे स्वामी । आपने अपने बेटे के विरोध करने के बावजूद मुझसे विवाह किया जब कि आप यह भली भांति जानते थे कि आप एक व्यर्थ का अंग हैं । नारी के लिए उतने ही निष्प्रयोजन हैं जितनी भैंस के लिए बीन ।"

सेठ जी उस समय चले गए ।

रात को सेठजी अपने किसी एक विशेष नौकर को कह रहे थे कि तुम्हें विमला से मित्रता बढ़ानी चाहिए ताकि इज्जत का खेल बाहर न खेला जाए। रसोई बनाने वाले ने यह बात विमला के कानों में भर दी। विमला को इससे हार्दिक संताप हुआ। वह पहर रात तक रोती रही। क्योंकि अपनी पवित्रता पर सन्देह की हल्की बूँदें भी उसे सह्य नहीं थीं। किसे पता था कि एक नारी अपनी जीवित अभिलाषाओं को केवल मृत मानकर जी रही है। किसने उसकी मुस्कान को समझने का प्रयास किया है कि वह अपने अमुखरी अन्तर से सदा उस वैभव सम सुहाग की कामना करती है जिसने उसे केवल मांग में सिन्दूर भरने की आज्ञा दे रखी है।

लेकिन सेठ जी की इस कुटिल-भिन्न भावना को सुनकर उसका हृदय निर्जीव नदी की तरह उछालें मारने लगा। उसने निश्चय कर लिया कि भावना का वश लेकर मनुष्य एकनिष्ठ अवश्य बन सकता है परन्तु वह अपने जीवन को अवि-राम सुख और महान सत्य से वंचित रख देता है। यह पति है —इसकी आरा-धना में मग्न रहकर क्या नारी-प्रकृति अपनी उस यथार्थता को भूल सकती है जो शाश्वत समर्प-विकर्षण के मूल में विपुल वासना की भाँति उसके अन्तराल को कचो-टती रहती है? महासती सुकन्या की विरक्ति और संतोष में छिपा हाहाकार और घृणा को क्या वृद्ध च्यवन ऋषि नहीं जानता था? वह नारी थी राजकुमारी थी, युवा थी। फिर विमला उस अन्तर्द्वन्द्व को अपने मन से कैसे निकाल सकती थी जो ब्रह्मा ने नारी की रचना के समय ही उसमें आरोपित कर दिया है। वह अशान्त मन लिए रात भर शय्या पर करवटें बदलती रही और अन्त में उसने विवश हो निर्णय किया कि देव वैद्य अश्विनीकुमारों के अभाव में उसे नया मार्ग ही चुनना पड़ेगा क्योंकि वह इस युग में इस वातावरण में 'महासती' का विशेषण अपने नाम के आगे कभी नहीं लगा सकती। उसका पति उसे दुश्चरित्र समझता है। नौकर उसे संदिग्ध दृष्टि से देखते हैं और उसका हर पुरुष-मित्र की नजर उसको एक ही कोण से देखती है कि कब यह उसके प्रेम को स्वीकार करे। पथभ्रष्ट बनकर जीवन गुजारने से अच्छा है कि रूढ़ि से मुक्त होकर पवित्र जीवन अपनाया जाए।

उसका विचार सूर्य की स्निग्ध ज्योत्स्ना के प्रथम दर्शन के साथ निर्णय में

परिष्कृत हो गया ।

सम्राट अशोक की पत्नी तिष्यरक्षिता का असत विग्रह उसके जीवन का विनाश कर गया लेकिन वह सही पथ को अपना कर कल्याणकारी जीवन को अपनाएगी । यही विरोध ही सुख का चरण होता है ।

प्यास के पंख

"मेरी मित्र है।"

"कौन है?"

"अच्छी है, मेरे से रंग आपसे मिलता-जुलता है। उम्र भी आप जितनी होगी। अगली सर्दी में उससे विवाह करने का विचार है।"

विमला के नेत्र भर आए।

कुणाल विह्वल स्वर में बोला "मैं आपके दर्द को जानता हूं। पर जब आप 'मां' बनकर इस घर में आ गई हैं तब आप मेरे लिए पूजनीय बन गईं। हमारी समस्त भावनाओं से बड़ी लोक-कल्याण की ही भावना है। इस भावना से हीन प्राणी प्राणी नहीं होता।"

"लेकिन मैं सेठ जी को तलाक दे रही हूं। क्या मेरे इस कुकर्म को देखकर तुम्हें मुझसे घृणा नहीं होती?"

"घृणा का इस मामले से क्या सम्बन्ध? यदि मेरा बाप नर की समस्त शक्तियों से पूर्ण होता तो मैं आपसे अवश्य घृणा करता। तब मुझे लगता कि नारी में श्रद्धा और त्याग की जगह चारित्रिक दुर्बलताएं एवं पतनगामी प्रवृत्तियां बढ़ रही हैं। लेकिन आप जीवन के लिए लड़ रही हैं और जीवन के लिए संघर्ष करना सम्माननीय समझा जाता है।" कुणाल गंभीर होकर बोला "हमारे यहां शब्दों की महत्ता पर अधिक हलचल होती है पर हृदय की मौन पीड़ा को कोई नहीं समझता। शब्द बोल सकते हैं और हृदय मधु बहा देता है। लेकिन मधु की भाषा यहां के प्राणियों के लिए अज्ञेय है इसलिए यहां नारी का अधिकाधिक शोषण होता है।"

विमला अपने शब्दों पर जोर देकर बोली "फिर भी लोग मुझे ही तो बुरी बातें कहते हैं।"

"यह उनकी आदत है। लेकिन नए युग में हम नई मान्यताओं एवं नए विश्वास के साथ नहीं जीएंगे तो एक दिन स्त्री-पुरुषों के सम्बन्ध इतने पीड़ाजनक हो जाएंगे कि जीना भी एक समस्या हो जाएगा।"

"तुम इस युग के देवता हो।"

"यहां देवता सहजता से बना जा सकता है पर आदमी नहीं। मां! मैं अपनी सफलता तो आदमी बन जाने में ही समझूंगा।

विमला उसके रूखे बालों में अंगुलियां उलझाती हुई बोली "मेरी एक बात मानोगे कुणाल ?"

"क्यों नहीं ? आपकी इन सेवाओं का बदला भी तो मुझे चुकाना है।"

"तुम मुझे 'मां' न कहा करो मेरे लिए विमला ही काफी है।

"क्यों ?"

"यूं ही।" वह फिर रो पड़ी।

"मैं आपके दर्द को समझता हूं। धीरज रखिए, न्याय आपके ही साथ है। मैं आपको नाम से ही पुकार लूंगा। मुझे कोई फर्क नहीं पड़ता—मां और विमला में। संज्ञाएं हृदय के सामने महत्वहीन होती हैं।

डाक्टर का कहना था कि स्वास्थ्य-लाभ के लिए कुणाल को ऋतु परिवर्तन की आवश्यकता है। इन्हें किसी पर्वत पर ले जाया जाए।

तीन रोज के बाद ले जाना तय हुआ। विमला ने कहा कि मैं इसके साथ जाऊंगा। सेठ जी की चिट्ठी आई थी कि कुणाल को किसी पहाड़ पर भेज दिया जाए। उन्हें विश्वास होने लगा था कि कदाचित् कुणाल की ममता और स्नेह विमला को अपने इरादे से विचलित कर दे। लेकिन विमला का विचित्र हाल था। वह व्यग्र रहने लगी। कुणाल से वह कम बोलती थी। भयंकर से भयंकर बातें वह सोचने लगी। वह बार-बार इन्हीं शब्दों को याद किया करती थी कि वह कुणाल साथ अकेली जाएगी।

निश्चित दिन विमला और कुणाल दोनों बम्बे गाड़ी पर सवार हो गए। कई मित्र उन्हें पहुंचाने आए थे। माधुरी भी आई थी। माधुरी से मिलते समय विमला फफक पड़ी।

"अरे तुम रोने क्यों लगीं ? अब तो कुणाल बाबू काफी अच्छे हो गए हैं।"

"बार मैं इन्हें ले जा रही हूं वापस पहुंचा सकूंगी कि नहीं भय लगता है। किसी की अमानत की देखभाल करना अत्यन्त कठिन है।"

"वह ठीक है लेकिन अब खतरे की घड़ियां टल गईं।"

"मनुष्य के जीवन का क्या भरोसा ?"

कीजिए।

"नहीं-नहीं मुझे नागपुर की ओर ही जाना है।" उसने अपने कलेजे को दोनों हाथों से थामकर कहा। फिर उसने भयभीत दृष्टि से उन दोनों व्यक्तियों को देखा। वह जान गई कि ये उसकी हड़बड़ाहट को समझ जाएंगे। इसलिए उसने कठोर मौन धारण कर लिया। वह तुरन्त कुमार के पास बैठ गई। गाड़ी रवाना हो गई।

अपने मुंह को पोंछकर वह करुण स्वर में बोली "ये अचानक बेहोश हो गए थे इसलिए मैं घबरा गई। मुझे नागपुर ही जाना है।"

"इन्हें कोई दवा दी?"

"हां।"

"फिर ठीक है।" कहकर चाक ने एक पल के लिए उस रोगी को देखा, "इसे मैंने कहीं देखा है। याद नहीं आता। भाई नरेन्द्र, बैरागी बनने से स्मरण-शक्ति की ओर से बड़ा उदासीन हो गया हूं।" चाक ने अपने साथ बैठे व्यक्ति से कहा।

अभी थोड़ी देर पहले ये बिलकुल ठीक थे। कमजोरी के कारण एकाएक ऐसा हो गया।"

"कोई बात नहीं। मैं याद कर रहा हूं कि ये कौन हैं? क्या आप बता सकती हैं?"

विमला का पाप अन्धकार बनकर उसकी आंखों के आगे छा गया। अब वह क्या उत्तर दे? उसे तो मसूरी जाना था फिर वह इस गाड़ी में क्यों बैठ गई? मन ही मन अपने पर झल्ला पड़ी। पर स्थिति बड़ी विकट थी। चाक की विशाल आंखें कुमार पर लगी थीं। उसकी पैनी दृष्टि से प्रतीत होता था कि चंद ही क्षणों में यह दृष्टि स्मृति-पटल का मंथन करके यह पहचान जाएगी कि यह कौन है? तब? लेकिन वह संभल कर संयत स्वर में बोली "आप इन्हें नहीं पहचान सकते। ये सदा गांव में ही रहते आए हैं। हम राजस्थान के हैं।"

"हां यह भी तो हो सकता है कि एक चहरे के दो व्यक्ति हों। एक मेरा मित्र और एक आपका पति।"

विमला उठकर खिड़की के बाहर देखने लगी ।

चक ने आश्वासन भरे स्वर में कहा "आप घबराइए नहीं ईश्वर सब अच्छा करेगा ।

लेकिन विमला उस अन्धकार में खोकर अपने अन्तर की उस पिशाचिनी को कोस रही थी जिसने उसकी नारी को मार दिया था । वह क्यों नहीं कहती कि यह उसका पति नहीं है । लेकिन अब बात कुछ आगे बढ़ गई थी । इसलिए उसने चुप रहना ही उचित समझा । वह खिड़की के बाहर अर्थहीन निगाहें देखती रही। देखती रही ।

चक ने दुबारा कहा 'भारतीय नारी की निस्सीम व्यथा से कौन अपरिचित है ? निरुपाय और अबला । तभी तो इतनी साधारण बीमारी में आप इतनी भयभीत हो गईं ? पर आप नहीं जानतीं कि प्रभु किसी को नहीं सताता । वह बड़ा दयालु है । सच्चे मन से उसकी आराधना करो । सब मंगल होगा ।

विमला चक की ओर पीठ करके बैठ गई ।

उसने मन ही मन सोचा कि वह अगले स्टेशन पर उतर जाएगी पर कहीं यह ? नहीं नहीं हे प्रभु, मेरी मदद करना ।" अचानक उसके मुख से यह शब्द निकल गया । तभी तो कहा जाता है कि प्रभु कवियों की कल्पना ही क्यों न हो पर प्राणी मात्र की सबसे बड़ी आस्था है । गहरा विश्वास है । अन्तिम सम्बल है ।

चक ने नरेन्द्र को कहा 'तृष्णा के अमत पंख हैं । ये पंख प्राणी को उस निस्सीम निखिल व्योम में उड़ाते ही रहते हैं जहां उसकी इच्छाएं, वासनाएं और प्रवृत्तियां अनगिनत तारों की भांति असंख्य रूप में फैली हुई हैं । क्या तुम उस तृष्णा का अंत नहीं कर सकते हो या सामाजिक दुराचार के अलावा अत्यन्त जघन्य व पतनशील है ? मैं समझता हूं कि वह दुरात्मा एक क्षण भी चैन नहीं पा सकता । लोगों की घृणा उसे सुख की सांस भी नहीं लेने देगी । वह दीन करुण आत्मा की हीनता के कारण ही मर जाएगा ।"

नरेन्द्र कुछ क्षण मौन रहा । उसने जलती आंखों से चक को देखकर तप्त स्वर में कहा "तुम्हारा देश समाज और धर्म बड़ा विचित्र है । धर्म और सत्य के आवरण में बड़े से बड़ा पाप कर लिया जाए, यही सही है और उस पाप को सदा के लिए

मिटा देने के लिए उठाया गया कदम यहाँ न जाने किन-किन गन्दे विशेषणों से पुकारा जाता है।"

"उस कदम में क्रांति और शांति को समाप्त करने के लिए जिस पावन भावना की आवश्यकता होती है, उसका अभाव रहता है। अपनी वासना की तृप्ति को के प्रहार की संज्ञा नहीं दे सकती।"

"तुम भी ऐसा कहते हो भैया ?

"हाँ विवाह एक संयोग है और सम्बन्ध मानवीय नाते-रिश्ते। माँ और बेटे के रिश्ते कभी नहीं टूटते। वह तुम्हारी सौतेली माँ है।'

'लेकिन मेरा उससे क्या सम्बन्ध है ? उसने अपने पति को त्यागकर दूसरा विवाह भी कर लिया है। अब मेरे बाप का उससे कोई सम्बन्ध नहीं रहा तब मेरा कैसे रहेगा ? मैं कहता हूँ कि उसने ब्राह्मण के घर को त्यागकर एक वैश्य से विवाह कर लिया। अब तो उसकी जाति भी बदल गई। मेरा उससे रक्त-सम्बन्ध भी नहीं है। फिर यह नाता क्यों ?"

'तुम्हारे विवेक पर वासना का आधिपत्य हो गया है। तुम पुनः 'आदिम' नहीं बन सकते। मनुष्य के तीन लोकों में सबसे बड़ा महालोक यह आत्मा है। अन्तर प्रान्तर में हजारों छवियों का अंकन है। इन छवियों में कुछ छवियाँ हमारे मानस लोक की अधिष्ठात्री होती हैं। 'माँ' सर्वश्रेष्ठ और महान् अधिष्ठात्री है। उसे इस पद से च्युत करने के बाद तुम कभी सुखी और प्रसन्न नहीं रह सकते।"

"लेकिन इस पृथ्वी पर जो सौतेली माताएँ अपने सौतेले बेटों से प्रेम-प्राप्ति कर लेती हैं उसे प्रकृति विनाश के पैरों क्यों नहीं रौंदती ? चाहे तुम्हारे समाज के कर्णधार, मनीषी सुधारक इस कटु सत्य को मेरा कमीनापन कहकर मेरा अपमान भले ही कर दें पर यह बीभत्स सत्य है।"

'भ्रष्टाचार एक गति बन सकता है सत्य नहीं। लेकिन क्या यह विस्मयदायक है कि विवाह के बाद वे दोनों स्त्री-पुरुष यह भूल जाएँगे कि कभी वे माँ बेटे थे ? वह तनिक क्रोधित हो गया। अपने क्रोध के कारण उसका मस्तक गर्म हो गया। वह शांति से बोला "तुम 'पुरुष' उस शाश्वत सम्बन्ध को कभी नहीं भूल सकते और न ही नारी।" क्यों बहिन क्या मैंने झूठ कहा है ?'

विमला निश्चल-सी उन दोनों की बातें सुन रही थी। उसका सारा बदन पसीने से तरबतर हो गया था। अचानक चक्र द्वारा प्रश्न किए जाने पर वह चीख पड़ी "मैं कुछ नहीं जानती, मुझे परेशान न करो।" कहकर वह सिसक पड़ी। रोती-रोती अपने आपसे कहने लगी "तुम नारी की व्यथा को नहीं समझ सकते उसके अन्तरतम की आग को महसूस नहीं कर सकते। वह विद्रोह की पुतली है वासना का आधार है और पीड़ा का महासागर है। किसी भी परम्परा की रचना के पूर्व इन मर्मों से परिचित हो जाओ।" उसने कुणाल का हाथ अपने दोनों हाथों से पकड़ लिया बड़ा मजबूती के साथ।

चक्र अपनी बात पर सवार था "यह सामाजिक दुराचार है। इससे बचो। कानून क्या रोकता है? पर कभी किसी ने क्या ऐसा दुष्कर्म करने का दुस्साहस किया है? ऐसी दुर्घटनाओं का परिणाम बहुत बुरा होता है।" तिष्यरक्षिता क्या कुणाल की आँखें निकलवा कर सिजमिनी बन गई? नहीं नरेन्द्र यह उस नारी की सबसे बड़ी पराजय थी। कुणाल 'माँ' शब्द की महानता पर मर मिटने के लिए तत्पर हो गया। "गूढ़ार्थ की बात यह है कि नारी अपने सौंदर्य से पुरुष को इतना दुर्बल कर देती है कि वह अपनी आसक्ति को क्रांति का उद्घोष समझ लेता है। वही आसक्ति तुम्हारे अन्दर के गहन गह्वरों में से रूप बदल कर बोल रही है। इससे सावधान हो जाओ! बचो! इस पाप के मूल का नाश करो। वृद्ध विवाह को मत होने दो। जड़ की समाप्ति के बाद यह विष-वृक्ष कभी नहीं लगेंगे। सामाजिक अनाचार को समाधान समझना सबसे बड़ा अपराध है।

"नरेन्द्र! पता नहीं लगता कि आज का आदमी इतना असन्तुष्ट क्यों है? किसी को जरा भी संतोष नहीं है। मैं इसका कारण मानव की प्यास समझता हूँ। यह तृष्णा एक दिन हमें किस परिणाम से टकराएगी हम इसकी कल्पना ही नहीं कर सकते। हम एक दूसरे से दिन प्रतिदिन दूर होते जा रहे हैं। मेरा छोटा भाई कभी मुझे पत्र नहीं लिखता कि मैं जिंदा हूँ या मर गया। बीणा आत्मपीड़न और पर पीड़न को लेकर संतोष का अनुभव करती-करती मृत्यु-शय्या पर क्षय रोग से पीड़ित पड़ी अंतिम श्वास गिन रही है। विरिजा की स्मृति में जीवन निर्वाह करने वाला सन्तु एक दुश्चरित्र क्लब में आने-जानेवाली युवती से विवाह करके अपना गृह

के प्रति निष्ठुर हो गया है। शीला की सहेली विमला अपने पति को तलाक दे रही है। तुम अपनी सौतेली मां से विवाह करने की बात सोचते हो। तो जरूर कोई सौतेली मां अपने पुत्र को लेकर भाग रही होगी।"

विमला बिलकुल निस्तेज हो गई। चीख उसके मुख से निकलते-निकलते रह गई।

(यह कैसा युग है भैया? "चारों ओर प्यास, प्यास प्यास! उफ! क्या हम युग के अभिशापों से बचकर उस सत्य और सुख को नहीं जान सकते जो जन-जन का कल्याण करता हो। उसे सोचने के लिए अपनी पवित्र साधना से उस अदृश्य के प्रचंड प्रकाश में अपने को लीन करना होगा। ये धूप-छांह की भांति बदलते हुए हमारे सम्बन्धों का अर्थ एक ही है कि हम उस महामंत्र के चिरन्तन स्वरों में अपने दूषित कर्मों को आलोकित करके तृष्णा का अंत करें, लालसा को मारें और अभाव को प्रभु का वरदान समझकर संताप ग्रहण करें अन्यथा एक दिन आदमी अशांति का पर्यायवाची हो जाएगा।")

गाड़ी खटाक-खटाक करती हुई रुक गई।

स्टेशन छोटा ही था। प्रकाश के नाम पर सिसकता हुआ लैम्प जल रहा था।

विमला उन्मत्त-सी खड़ी हुई। उसके पांव कांप रहे थे। उसके अन्दर की पशुता मर रही थी जिससे वह घृणा करती थी। अब वह सही पाथेय को ढूंढेगी।

डिब्बे से निकलते ही उसने अपने आपको कुछ निर्भय पाया।

"यह रास्ता गलत है।" उसकी आत्मा ने कहा और वह उतर गई।

गाड़ी के पहले धक्के के कुछ क्षण पूर्व कुणाल ने पुकारा "मां मां!"

भावाभिभूत चक्र चीख पड़ा "मां!"

नरेन्द्र के मुंह से निकल पड़ा "मां!!"

चक्र ने उस अनन्त तिमिर में झपट कर देखा कि एक नारी स्टेशन के बाहर विस्तृत तिमिर में आलोक के पदचिन्ह छोड़ती हुई अदृश्य हो रही है और गाड़ी अपनी गति पकड़ रही है।

चक्र ने नरेन्द्र से कहा "समय बीत गया। प्यास पंख हीन हो गई। तिम्प

ेरा ने यही मार्ग अपना लिया । अब इस घर को सँभालो, इस मनुष्य समझकर
की उत्तराधीन सेवा में लग जाओ ।' 'यही हमारे मन का धर्म है, जीवन का
में है । स्वस्थ विचार, यही पथ और उचित संघर्ष और क्रांति !" 'पाती बानी
र रही थी ।